MSS No. 253 Subject Philosophy

Name of MSS गीता श्रीमद् भागवद्

Author

Period – – Folios 112 (00a + 001 to 111) various pagination

Script Hindi Source

Missing Folios – –

श्रीगणेशस्वरूपगुरवेनमः॥ वेदत्रयकांड
रूपजो एह श्रीमद्भगवद्गीता अलौकिक
शास्त्र है सो त्रिषट्करूप है॥ सो प्रथम
षट्क कर्मकांड कै उपदेश करि श्रीभगवा
नजी अर्जुन का हृदा शुद्ध कराया॥ अरु द्वती
य षट्क उपासनाकांड के उपदेश करि चित्त की
एकाग्रता उत्पन्न कराई॥ अब इस तृतीय ष
ट्क करि श्रीभगवानजी ज्ञानकांड का उपदे
श करते हैं अर्जुन की ज्ञान में रुचि देखि सांई
शर्नदिव कै वलंनानापंपरिखि चित्ते अयनाया
यकरते श्रुति:॥ इति सज्ञान पाइबे अ॰ अर्जुन
षट्प्रश्न उठावता है॥ अर्जुनोवाच॥ श्लोक॥
प्रकृतिं पुरुषं चैव क्षेत्रं क्षेत्रज्ञमेव च॥ एत
द्वेदितुमिच्छामि ज्ञानं ज्ञेयं च केशव॥१ अर्थ:
हे केशव प्रकृति जो है पुरुष जो है और क्षेत्र
क्षेत्रज्ञ जो है और ज्ञान ज्ञेय जो इन को जान्या चाहता हूं

स०कार्य ३

भावये प्रकृत्तकहीयेतत्पदसंबधीमायाअ
रपुरुषकहीयेतत्पदचेतन्यईश्वर॥अर
क्षेत्रकहीयेत्वंपदसंबधीअविद्याअरक्षेत्र
ज्ञकहीयेत्वंपदचैतन्यजीव॥अरज्ञानकुन
तोत्वंपदचैतन्यअरतत्संबधीजउउपाधिअ
रुशुद्धचैतन्यलक्षस्वरूपकोजोप्रकारश्रीकहे
हेअर्थयहज्ञेयकहो॥अरजोईलक्षस्वरूप
चैतन्यशुद्धनिर्विभागसोयहै॥सोइनसक
ल्योंकोअपरोक्षकरजानो एह अर्जुनकेप्र
श्नश्रवणकरकेश्रीभगवानजीआदिविवे
संक्षेपकरआदिविबेकक्षेत्रक्षेत्रज्ञकेसरूप
कोकहतेहैं॥ननुप्रथमअध्यायअर्जुनकोतोप्रकृत
पुरुषकायां॥उत्तरपूर्वहीयद्दूकोविषपरो
करतत्त्वंपदकास्वरूपअर्जुनभलीप्रकारजा
न्याहै॥अबपरहिलेजोक्षेत्रक्षेत्रज्ञकास्वरूप
श्रीभगवानजीकहतेहैसोइसकाएहहेतुहै॥

[illegible]

[illegible]

जोपहिलेंत्वंपदअपरोक्षआपस्वरूपकोअप
रोक्षकरअनुभवकरेअरतिनतेंपीछेंति
सहीत्वंपदस्वस्वरूपकोहीतत्पदरूपाजोअक्षर
सोईहीअधिष्टानस्वरूपअरूपदब्रह्महैसो
जानें॥ अथवायद्यपिअक्षरपुरुषकास्वरूप
श्रीभगवानजीआगेंनिरूपणकरेंगेभीपरं
तुईहांसार्धश्लोककरएकजीवपदइउत्तम
संधानकरहैक्षेत्रअरक्षेत्रज्ञअरपुरु
षकाएकस्वरूपवर्ननकरेहैं॥ अरअर्धश्लो
ककरज्ञानकास्वरूपवर्नहोवेगा॥ श्लोक॥
इदंशरीरंकौंतेय क्षेत्रमित्यभिधीयते॥
एतद्योवेत्तितंप्राहुःक्षेत्रज्ञमितितद्विदः॥ अर्थः
हेकौंतेयइनशरीरकोक्षेत्रऐसेजानी
ये॥ इनतिनकोजोजाणताहैतिसकोतद्वि
दःक्षेत्रज्ञकहतेहैं॥ भावयह इदंकहणेक
रसाक्षीकीदृशाजणायाअरशरीरकही
येजोनत्वज्ञानकरअभाववानदृष्टीआवे॥

सोई है तत्त्वंपद उपाधि को क्षेत्र कहे अरु त्वंपद को
क्षेत्रज्ञ कहे तिस क्षेत्र तें उपज्या जो फल है तिस फल
कौंतेय कहीये कर्मयोग की सिद्धता कर अंतः
करण को प्राप्ति है अरु उपासना कर एकाग्र है
ऐसी जो वृत्ति है तिस कर जो उपज्या अभेद द
र्शन संकल्प है सो तत्त्व स्वरूप जो अर्जुन है तिस
प्रति श्री भगवान का संबोधन है हे कौंतेय
इन शरीर को क्षेत्र ऐसे जाणी यो क्षेत्र क
हीये क्षेत्री चैतन्य का संकल्प स्वरूप जो भू
तां का संघात है अरु शरीर कारण सूक्ष्म
स्थूल त्रिविध है ... वा ईश्वर संबंधी जो
तीनि शरीर है सो कहीये शरीर सो इन श
रीर को क्षेत्र शब्द कहते कर प्रा... ॥ भाव
अरु प्रध्वंसाभाव अरु अन्योन्याभाव वान
हे ज्ञाया ॥ अभिधीयते कहीये विवेक क
रीया ॥ एतद्यो वेत्ति कहीये जो इनकां ज्ञाता
है ॥ तद्विदः कहीये ते क्षेत्र क्षेत्रज्ञ के
स्वरूप का ज्ञाता अरु अधिष्ठान अरु साक्षी
अर्थ यह तिस क्षेत्र का ॥१

...एकप्रकारकी जीवको आनती है अ
आपहीतेन्यारहै सोजणाया॥
आपकोअनुभवकरत्याहै॥सोनाविदांत
कहीयेतिसजानतेकोक्षेत्रज्ञकहतेहैं॥दे
हइन्द्रियादिकरपूर्वनिरूपेतिनआभासोंतेविनि
र्मुक्तत्रिकालसत्तस्वप्रकाशजणाया॥अ
र्थयहक्षेत्रज्ञशब्दकरत्रिकालसत्तसरूप
आरवेरति इनशब्दकरस्वप्रकाशचेतन्य
जणाया॥अरुनविदपुरुषकाप्रमाणइसरीत
हेतेहैंजोकेईएकशून्याकारजोजीवकोपरा
धीनचेतन्यअरुईश्वरतेंभिन्नकहतेहैंअरु
केईएकड्वास्वरूपज्ञानगुणाश्रयस्वप्रकाशरूपि
पअरुकेईएकजडचेतनरमिश्रितजीवकोमा
नतेहैंसोअनविदहैं॥रतिन्हांकाकहाअप्र
माणहै॥सोवहकोनहैंसुनो॥मीमांसाजी
वकोकर्माधीनमानतेहैसोतिनकावचनअ
नंगीकारहैतहांश्रुतिहै साक्षीपरानपेक्ष
सत्तस्वरूपहेइरती॥ततनशृपनसुनरविनश्यति

अर्थ यह है कि और कर्म से उत्पन्न पदार्थों के नाश से चैतन्य का नाश नहीं है इति स्मृतिः ॥ और नैयायिक और वैशेषिक जो आत्मा को द्रव्य स्वरूप कहते हैं सो तिनका वचन भी नि षेध है तहां युक्ति है जैसे दीपक का प्रकाश गुण है सो तेल आदि द्रव्य से भिन्न है तैसे आत्मा ने सेकार्य नहीं अद्वयं चेतनत्व ॥ तिस आत्मा के कार्यकारण ता नहीं ॥ और सांख्य पातंजली जो ईश्वर से भिन्न आत्मा को मानते हैं तिनका कहा हुआ अप्रमाण है ॥ तहां वाक्य प्रमाण है एको देवः सर्वभूतेषु गूढः ॥ एकधा बहुधा चैव दृश्यते जलचंद्रवत् ॥ सूर्य का यह वाक्य ॥ अनेन जीवेनात्मनानुप्रविश्य नामरूपे व्याकरवाणि इत्यादि श्रुतिः ॥ और केई जड चैतन्य को आत्मा मानते हैं सो तिनका वचन भी अप्रमाण है अयुक्तत्वतें जैसे सूर्य और तम एक ठे नहीं होते इत्यादि और स्वेच्छा मात्र है इस प्रमाण ते है ॥

इत्यर्थः॥२ इन पूर्वं ने स्त्य ते अर्थको एकजीव
पक्ष करत त्वं आप ही है सो उत्तर श्लोक के पूर्वा
र्ध कर वर्नन करते हैं। क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि
सर्वक्षेत्रेषु भारत॥ अर्थ यह सर्व क्षेत्र विषे
क्षेत्रज्ञ मो को जाण्या हे भाँत॥ भाव यह भारत
कहीये भरत कुल ते उपजा अर्थ यह बलवा
न बलवान् कहीये आत्मस्वरूप राज के नीत
को चाहता जो अर्जुन है सो हे अर्जुन सर्व क्षे
त्र विषे कहीये सकल स्थावर जंगम शरी
रों विषे क्षेत्रज्ञ मो को जाण॥ सो दिखा
वते हैं॥ जैसे प्रत्यक्ष जो क्षेत्र समूह है तिन
के आवरणादि कर्म का प्रसिद्ध कर्त्ता जो स्वज्ञा
त है सो एक है॥ तैसे परोक्ष प्रत्यक्ष स्थावर
जंगम जो क्षेत्र हैं तिन क्षेत्र समूह विषे ए
क मैं ही उपादानत्व कर अरु निमित्तत्व कर

हे व्यापक अनस्यूत अरु साक्षी चेतन हूं
अरु सदा निर्विकार हूं। काहे ते जो एह सक
ल सु जगत स्वरूप अधिष्ठान विषे कल्पि
त है सो कल्पित विकार त्वके विषे घमान त
क रहे अरु अधिष्ठान सत स्वरूप सदा निर्वि
कार है॥ अरु भिन्न भिन्न उपाधीओं कर जो
चैतन्य है भिन्न भिन्न दृष्ट आवता है सो
तिन की भिन्न भिन्नता का स्वरूप मै ही ए
क अभिन्न विवर्त भाव कर धास्या है॥
सो इस कर एह जगत या सकल जो एह
क्षेत्र है सो जड अरु असत रूप है ताते मिथ्या
है अरु इन विषे मेरी सत्ता जीव रूप धार
कर प्रवेश होइ इन को प्रेरणा करती
है। ताते सकल क्षेत्र विषे क्षेत्रज्ञ मो को

तहां स्फुरत है यह आत्मा में तद्रूपमय रहत यह सवी
ए भूमानंतर संप्रदाय जीति
ज्ञान इत्यर्थः ॥ ननु जे नकर एह सकल
कहनु मात्र ज्ञान सो त्तिन ज्ञान का स्वरूप
मुज को कहो श्री भगवान जी इन अर्जुन
की आकांक्षा को लख कर कह तीन श्लोको
क कर ज्ञान के स्वरूप को कहते है ॥
क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं
मम ॥ ३ ॥ टीका क्षेत्र क्षेत्रज्ञ का ज्ञान है सो ज्ञान अर्थयह
न मेरे मान्य है ॥ भाव यह पूर्व निरूपित जे
क्षेत्र क्षेत्रज्ञ का जानना और जब शास्त्रा
चार्य गुरु के उपदेश कर वृत्ति विषे उपजे सो
ज्ञान मेरे मान्य है ॥ ननु एह तो स्वरूप ज्ञान
मुज को कहो ॥ उत्तर एही वृत्ति ज्ञान ही साध
नो की दृढता कर स्वरूप ज्ञान ही हो जावेगा
अर्थ यह एह जो विकल्प सहित ज्ञान है सो

साधनोकी दृढता करनेसे वृत्तिके अत्यंत
निरोधतें निर्विकल्प क्याब्रह्माकार स्वरूप
होजावेगा इत्यर्थः ॥३॥ अब श्रीभगवा
नजी क्षेत्रके सो अंतरगत भेदों सहित
और क्षेत्रज्ञके प्रभावको कहते हैं॥ श्लो०॥
तत्क्षेत्रं यच्च यादृक्च यद्विकारि यतश्च
यत्॥ स च यो यत्प्रभावश्च तत्समासेन मे
शृणु॥४॥ सो जो क्षेत्र है जो धर्मवान है जो वि
२ कार है जिसतें है पुनः जो है॥ च पुनः सो क्षेत्र
ॐ ज्ञ जो प्रभाव है सो संक्षेपतें मुजतें श्रुण॥ त
श्री त्क्षेत्रं पत्र कहीये महाभूत आदि जो क्षेत्र है सो ज
डरूपस्वरूप है यादृक् कहीये इच्छादि धर्मवान
है अर्थ यह इच्छादिक जो इच्छा द्वेष गुण हैं सो
चैतन्याभास क्षेत्रके धर्म हैं और गुण जड
क्षेत्रके हैं॥ यद्विकार कहीये क्षेत्र इंद्रियादि
कोकार विकार है यतह कहीये प्रकृतपुरुष
येव

तहां भुक्ति है चैतन्याभास जो अज्ञान है सो ब्रह्म
के सर्व प्रकार कार एकत्व कार निवृ
के संबंध [illegible] तें है अथवा है शक्ति जो ज्ञान अहंकार है
र क्रिया शक्ति है तिन वान जो अज्ञान है तिस
तें है यत् कहिये जो है अर्थ यह स्यावर जंग
म रूप इति अर सिचयो यत्प्रभावश्च कहि
ये सो क्षेत्रज्ञ जो प्रभाव है अर्थ यह
ईश्वर आत्मा अचिंत्य शक्ति है सो एह क्षेत्र
क्षेत्रज्ञ संक्षेप तें मुज तें सुण॥३॥ ईहां सं
क्षेप कर कहत्या भगवान का इस हेत है जो
बहुत स्पानों विषे बहु प्रकार कर ऋषी
अर वेदों वर्णन कर्या है॥ सो कहते है॥ श्लो॥
॥ऋषिभिर्बहुधा गीतं छंदोभिर्विविधैः
पृथक्॥ ब्रह्मसूत्र पदैश्चैव हेतुमद्भिर्वि
निश्चितैः॥४॥ अर्थ ऋषीयों ने बहुत प्रका
र कर गाते हैं अर वेदों ने विविध प्रकार कर
पृथक पृथक कर गाते है ब्रह्मसूत्र अर
पदों हेत मानों अर [illegible] ने श्वेतता कों कर इति॥
भाव यह

वसिष्ठ व्यासादिकों कहे हैं रूचक ही यें ब्रह्म
ज्ञान योग सिद्ध रहित जिन के प्राप्त होइ॥
सो श्रीवसिष्ठादि रूप ध्यान समाधि विषे स्व
रूप पैं कहे वेद का स्वरूप कहत भये हैं अरु वेद
जो वेद है सो हेतमान अरु विनिरूपित ता कों क
रइन दोनों के स्वरूप कों कहत भये हैं। हेतुमा
ने वाक्यें का स्वरूप ये॥ यतो वा इमानि भूतानि
जायंते तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः
संभूतः न माता न पिता तहां होइ वेद लोका
तहां न कोई॥ निश्चय कछ यह जगत आगे अ
सत होत भया १ [illegible] उत्पत्ति तें पहिले एह जग
त अव्याकृत रूप होत भया १ तम होत भया १
इत्यादि हेतमानि वाक्या हैं॥ सत्यं ज्ञानमनंतं ब्र
ह्म १ ज्ञानं ब्रह्म आनंदो ब्रह्म विज्ञानमानंदं ब्र
ह्मेति च॥ एष ते आत्मा सर्वांतर १ तत्सत्यं
स आत्मा १ तत्त्वमसि प्रज्ञानमानंदं ब्रह्म १
अयमात्मा ब्रह्म अहं ब्रह्मास्मि १ इत्यादि

र्थैर्निश्चितैवाक्यानि॥५॥ अब देहकोंकर
सविकार क्षेत्र का स्वरूप कहीयत है॥ श्लो॰
महाभूतान्यहंकारो बुद्धिरव्यक्तमेव च॥
इंद्रियाणि दशैकं च पंच चेंद्रियगोचराः
६॥ इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं संघातश्चेतना
धृतिः॥ एतत्क्षेत्रं समासेन सविकारमुदा
हृतं॥७॥ अर्थ ये महाभूत जो है अहंकार
जो है बुद्धि जो है च पुनः अव्यक्त है॥ इंद्रिय जो
दश और पुनः एक जो मन है पंच जो ज्ञानेंद्रि
यों के विषय हैं॥ इच्छा जो है द्वेष जो है सुख
दुःख जो है संघात जो है चेतना जो है धृति जो
है एह संक्षेप कर सविकार क्षेत्र कहा है॥
इति॥ २॥ भाव यह महाभूतों के कहने
कर के तत्कारणों जो प्रकृति रूप पंचतन्मा
त्रा हैं सो निश्चय कर लेने योग्य हैं॥ और

अहंकार जो है॥ अर बुद्धी कर तत्कार
ता जो महातत्व है सो जाणबे योग्य है॥ सो
सब जो प्रकृत विकृत हैं सो यह स्थावर
जंगम रूप ता कर है अनेक धर्म के आपरू
प कर कहीयत है॥ अर इछादिक गुण तन
धर्म कहीयत है॥ अर दश इंद्रिय अर ए
क मन, अर पंच ज्ञानेंद्रियो के शब्दादि
पंच विषय जो हैं एह षोडश इनके अ
कार विकार कहीयत है॥ अर अव्यक्त
जो प्रकृति है प्रकृति के अहंकार तें पुरुष
का संबंध है जानबे योग्य है॥ सो इस प्र
कृति पुरुष तें है ते की उत्पत्ति है॥ भा
वयह चतुर्विंशो कर विशेष जो प्रथम म
हे क्षेत्र च यत् श्लोक है॥ सो तैसे सकल शरीर
जड रूप स्वरूप ईहां कहा॥ अर इनि सब्लोक
के अंतर विषे जो यत् श्लोक है तैसे सकल अर्थ

ईहां स्थावरजंगमरूप क्षेत्रजगत्‌या॥ अर
यांदकच श्लोक करइच्छादिकधर्म तिसक्षेत्रके
कहे॥ अरु यरह्विकार श्लोककर इंद्रियादि तिस
क्षेत्रके विकार जताये अर यतः श्लोक का अ
र्थ अव्यक्त ते इन क्षेत्र की उत्पत्ति दिखाई॥ सो
त्वंपदके क्षेत्रँ कहणेविषे अव्यक्त प्रकृत वा
ची है॥ अरु एक जीवतत्पद के क्षेत्र कहणे
विषे अव्यक्त को स्वरूप निर्विभाग अरु य
जो कारण का ज्ञान है सो कहा है॥ अरु सचयो
यत्प्रभावा इन श्लोक का अर्थ आगे जहां प्रक
त्ति पुरुष को दिखावेंगे तिनन्ने आगे निरूप
ण होवेगा॥ ईहां तिसपूर्व कहे चतुर्थ श्लोक
का अर्थ षष्टम सप्तम श्लोक विवरनि रूपण
करया॥ ७॥ अब पूर्व सिद्धकरया जो ज्ञान
है तिसकी सिद्धिनमित्त साधन श्लोक पं
च कर कहते हैं॥ श्लोक॥ अमानित्वमदंभि
त्वमहिंसा क्षांतिरार्जवं॥ आचार्योपासनं शौ
चं स्थैर्यमात्मविनिग्रहः॥ ८ अर्थ यह अमानि
त्व कहीये सकले मेरा सत्कार करे इस भाव
ना का त्याग॥ सो इस भावना विषे दोष दिखावे

तो

अर्चितोपूर्णोरवित्रो दुग्धागोरवमद्धरति॥ अ
थवा अमानित्व कहीये अपणा निरादर सह
णा॥ इस निरादरके सर्वकार विषे फल कहते
हैं॥ असन्मानात्तपोवृद्धी सन्मानात्तपसःक्षयः
॥ अरतीर्जनसंसदै इति॥ अदंभित्व कहीये
औरांके निरकिट बैठके हरे प्रीत विना जो ध्य
नादि करणे इस भावतें रहित होवणा॥ अ
हिंसा कहीये मन वाणी काय कर काहूको
दुःख नदेणा॥ क्षांत कहीये लयविद्वेपक
न्यायतें रहित होवणा॥ आर्जव कहीये स्वच्छ
भाव सो मन वाक् काय कर सूधो रहणा॥
आचार्योपासन कहीये ब्रह्म आचार्य गुरांको
भगवद्रूप निश्चय करके तिनां उपदेशांको
सत्कार पूर्वक धारणा॥ अरु मन तन वाणी
कर भावना अरु आशा अरु स्तुति करणी
स्थैर्य कहीये मनको पांच वृत्ती जो प्रमाणादि
हैं तिनतें रहित करणा॥ शौच कहीये शुच
रहणा॥ सो शुचता दो प्रकार की है अंतर बा
ह्य के भेदकर॥ अंतर रागादिकोंतें रहित हो
णा॥ अरु बाह्य शुचता जलादिकोंकर करे॥

अनिरविनै ग्रहकहीये मनको चारणादि
कों विषेलगाचरणा इति ८ श्लो० इंद्रियार्थे
षुवैराग्यमनहंकार एव चा। जन्ममृत्यु
जराव्याधिःदुःखदोषानुदर्शनं॥ ८
अर्थः इंद्रियांर्थी विषैवैराग्य कहीये
विषयांके दोषजे मोक्ष शास्त्रों विषै कहे
हैं तिनोंको स्मरण कर के तिन विषयां
की प्रीति चित्त तें दूर करणी अनहंकार
कहीये अहंकार तें रहित होणा सो हंका
र चार प्रकार का है एक माता पिता कर
उत्पत्ति जो भूत समूह देह है तिसको अप
णा स्वरूप मानणा। दूसरा सूक्ष्म तें सू
क्ष्म हूं। तीसरा सर्वव्यापी हूं मैं। चौथा मैं
नहीं ब्रह्म है सो इन चारों विषे प्रथम का त्या
ग है अरु और तीनिका ग्रहण है ज्ञानार्थी
दुःखदोषानुदर्शन कहीये दुःखदोषोंका

जन्ममृत्युजराव्याधिः

२

विचारराग जन्म मृत्यु जरा व्याधि के विषे दो जन्म कहीये प्रादुरभाव अर्थ यह भूतसंघात का प्रगट होना सो जन्म प्रादुर्भाव के अंत मे मृत्यु का नाम है और मृत्यु कहीये प्रादुर्भाव का पूर्व विरुता जरा कहीये वृधावस्था जो पराधीनादि दोषों सहित है व्याधि कहीये वात पित्त कफादिकों कर शरीर के रोग है सो इन विषे दुःख का अनुभव कर राग और इन जन्मादिकों का आश्रय जो शरीर है तिस विषे दोषों को विचार राग २

श्लो० असक्तिरनभिष्वंगः पुत्रदारगृहादिषु ॥ नित्यं च समचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु ॥ १० ॥ अर्थः असक्ति कहीये कर्म कर्तृसंगति आपको असंमानना ॥ अनभिष्वंग पुत्र दार गृहादि

सु कहीये पुत्र इस्त्री गृहादिकों विषे सो
हतोइ रहित है ऐसा मोह कहीये तिनके
दुःख सुःख विषे आपको दुःखी सुखी
मानना ॥ और इष्ट अनिष्ट की प्राप्ति विषे
समचित्तत्व कहीये इष्ट जो वांछित पदा
र्थ है और अनिष्ट कहीये अवांछित तिन
दोनों की प्राप्ति संते चित्त सम रहे हर्ष शो
क कोन प्राप्ति होवे तहां एह विचार करे
जो प्रारब्ध अनुसार है जो इन के फल हैं सो
अवश्य भोगने है अथवा रमै व्यापक
रूपित है स्वपन विषे पुत्र धनादि के उत्पत्ति
औ नाश का कोन हर्ष शोक है ॥ ११ ॥ श्लोक
मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचा
रिणी । विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्ज
नसंसदि ॥ ११ ॥ अर्थ यह मुझ विषे अ
नन्य योग कर अव्यभिचारी भक्ति

ते

एकांतदेशकासेवना अरजनूकीसभा
विषेप्रीतितैरहितहोवना।अरन्याया
गकहीये अन्याश्रयतैंरहितहोया।म
यकहीये सुजसविषेअव्यभिचारीभक्ति
कहीये जोभक्तिसंपूर्णविषेकैंप्रारब्ध
संतेव्यभिचारकोनपावे ज्योंप्रह्लाद
नखैचल्योजाते अर्थयहपर्वतादिके
हारलोदिकष्टप्राप्तिसंतेअररराज
लाभअरशत्रुवधादिसंतेप्रह्लादि
परमेश्वरकीभक्तितैंचलाइमानन
भयानदृत।विविक्तदेशासेवितकही
येएकांतविषेस्थितहोवना जोहाइ
सरजनरहितकोई अथवाइसूरज
नकहीये हैंनबुधीपुरुष।अरजनो
कीसभाविषेप्रीततैरहितकहीये
मानीपुरुषोंकीसभाविषेनजावे

अथवा परदेशप्राप्त हुवे ज्ञानें तिनकी

संगत प्राप्ति भी होवे तो भी प्रीत न करे

॥११॥ श्लो० अध्यात्म ज्ञान नित्यत्वं तत्व

ज्ञानार्थदर्शनं एतज्ज्ञानमिति प्रोक्त

मज्ञानं यदतोन्यथा १२ अर्थ यह अ

ध्यात्मज्ञान का नित्यत्व अरु तत्त्वज्ञानार्थ

दर्शन एह ज्ञान के साधन कहे

हैं इनतें जो अन्यथा है सो अज्ञान रूप

है। अध्यात्म कहीये कार्यकारणसंघा

ताश्रय चैतन्यात्मा तिसके ज्ञान का

नित्यत्व कहीये जो तिसका सो अंतराल

तें रहित होवे अर्थ यह विघ्नकर्ता जो का

मलोभादि है सो जहां अवसर न पावे॥

अरु तत्त्वज्ञानार्थ दर्शन कहीये सत

स्वरूप आत्मा के रूपक जो वेदांत

शास्त्र हैं तिनका सदैव अध्ययन अरु

विचार

११

एतनकहीयेएहनिरूपणाकरकेजोवी
सलरूपहैंसोज्ञानकेसाधनहैंभाव
यहइनकेसेवणकरनेअवरूपज्ञान
कीप्राप्तिहोतीहैअरजोइनकेविरोधी
धर्महैंसोअज्ञानसरूपहैंअर्थपरूअ
ज्ञानकेवधकरताहैं तातेंजैसेकैसे
ज्ञानसाधनोकोवधावेइनकेवधावे
तेंआत्मसाक्षात्कारकीप्राप्तिहोतीहै॥अर
इनतेविपरीतधर्मोंकीवधताते अज्ञा
कीवधताहोवेगीइति॥१२ ननुक्षेत्र
क्षेत्रज्ञकास्वरूपंजोतुमवर्ननकीयाति
सकरमैंतत्वंस्वरूपकेवाच्यार्थअर
लक्ष्यार्थस्वरूपकोजानतामयाहूपरं
तुवाक्यार्थकिरजोअखंडसरूप
मैंज्ञेयहैसोज्ञेयहूकहो॥अरतिः
सकेज्ञानकास्वरूपहूविस्तारकरके
हो

अमानित्वादि ॥

ऐसी थीं। श्री भगवान जी इन अर्जुन की चितवृत्ति
यों को [illegible] करके उत्तर कहते हैं
॥ श्लोक ॥ ज्ञेयं यत्तत्प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वा
मृतमश्नुते अनादिमत्परं ब्रह्म न सत
तन्नासदुच्यते॥१२॥ अर्थः जो ज्ञेय
है सो कहता हूं मैं जिसको जानकर
अमृत को पावता है। कैसा है ज्ञेय सो
सुणो॥ अनादि मान है परब्रह्म है सो
न सत कहीयत है न असत कहीयत
है इति॥ भाव यह ज्ञेय स्वरूप अब कही
यत है ज्ञेय कहीये जहां ज्ञान की लयता
हो जावे॥ ननु शून्य होवेगा॥ उत्तर जहां
शून्य होती है तहां तद्द्रष्टा सिद्ध कर्ता अशू
न्य चैतन्य होता है शून्य असत जड रूप है
अरु तातो चैतन्य स्वरूप है सोई चैत
न्य इस द्रष्टा रूप भाव ते रहित ज्ञेय स्वरूप

कहीयत है शून्य के जानन तें शून्य की प्रा
प्त है अरु ज्ञेय के जानन तें अमृत की प्राप्त
है अमृत कहीये मोक्ष का जिसको परम वे
धम पद कहते है तहां भगवान जी भी कहा है
नेन्धाम परमं मम॥ सो ज्ञेय अनादि है मा
याभास न जीवेश्वरो करो इति इस श्रुति कर
ए ह जनाया जो माया ने एक आभास को
तिस आभास के बले कर जीवेश्वर है
क र्या है सुध सत्व उपाधि कर ईश्वर अरु मल
न सत्व उपाधि कर जीव ता तें जीवेश्वर
सादी है जो तें इन तें परे है ता तें ज्ञेय अना
दी है॥ इन तें परे माया है जिन कर ए ह
दोनो प्रगट भये है सो ई ज्ञेय है इति चे
त्या है॥ ज्ञेय परं ब्रह्म है भाव यह ब्रह्म जो
माया है सो तिस तें परे अब्रह्म है॥
अरु माया सत्ता सत्त रूप है काहे तें
जो चेतन सत्ता कर सत्त है स्वतन्त्र

स्वरूप कारने
तायि है सो पांच
श्लोकों
कर श्री
भगवान
जी ५

सत्त है सो ज्ञेय सत्त असत्त नहीं कहीय
तु है॥१३॥ ननु ऐसो ज्ञेयस्वरूपको कै
से मै जानौ॥ उत्तर तिसके जानिनन मे
न विधन बंधवा को पास रहित जो ज्ञेय में
कहतो हैं॥ श्लो०॥ सर्वतः पाणिपादं तत्
सर्वतोक्षि शिरोमुखं॥ सर्वतः श्रुतिम
ल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति॥१४॥ सो ज्ञेय अर्थ यह
सर्व ओर जिसके पाणिपाद है सर्व ओर
ते अक्षि शिर मुख है चहूं ओर श्रुति
मान है लोक विषे सर्वको व्याप कर स्थि
त है॥ भाव यह जो ज्ञासी पुरुष प्रथम ज्ञेय
के जानिबे निमित्त ऐसे अनुभव करे जो
स्थावर जंगम जो जीव हैं तिनके जो कर्मे
न्द्रिय हैं पाणिपादादि अर ज्ञानेंद्रिय जो च
क्षु अर वाक् श्रोत्रादिक हैं अर शिरादि
जो अंग है सो सकलों विषे जो अहं अभिमा
न है

अर्थयह मैलेत्ताहूं देताहूं चलताहूं देखता
हूं कहताहूं श्रवण करताहूं मैं एही देहहूं
सो सर्व एह अभिमान अधिष्टान जो आ
नंदस्वरूप है तिसका विवर्त है ताते
सर्व उही है॥ ननु जे सर्व ही विवर्त उही है य
जीव दस्थित है तो एह सकलों क्यों नहीं जान
ते॥ उत्तर सर्वों के ज्ञान को मैं ही आच्छा
दन कीया है क्यों आच्छादन कीया है इस
चेत्याह अज्ञान की प्रबलताते ननु जे अ
ज्ञान ऐसा बली है तो ज्ञानीयों को भी भ्र
मावेगा॥ उत्तर अज्ञान भ्रमीयों को भ्रमा
वता है ज्ञानी आपको ब्रह्म अज्ञान का अ
धिष्टान मान्या है इसीतें तिसको नहीं भ्र
मावता इति॥ १४ श्लो०॥ सर्वेंद्रियगुणाभा
सं सर्वेंद्रियविवर्जितं॥ असक्तं सर्वभृच्चैव
निर्गुणं गुणभोक्तृ च १५ अर्थयह

सर्वइंद्रियोंके गुणोंका प्रकाशता है सर्वे
इंद्रियों ते रहित है असक्त है अरु सर्वको
धारण हारा है। निर्गुण है च पुनः गुणों
का भोक्ता है। भाव ये सकल इंद्रिय जो वि
षयों विषे प्रवर्त्तते है सो विषयों की सिद्ध
ता प्रमेय चैतन्य करे है अरु इंद्रियों को चै
तन्यता प्रमाण चैतन्य करे है ताते सक
ल इंद्रियें के गुणों का प्रकाशक है। अरु
सर्व इंद्रिय वर्जित कहीये तिनके अभि
मानते रहित है असक्त है अरु सर्वको
धारे रहा है कहीये स्थावर जंगम सक
ल जो जगत है तिसका कारण है विवर
तरूप करके अरु असंग है। जैसे रज्जु स
र्व सर्प का चैतन्य जड का आधार है अरु
असंग निर्विकार है। १५। श्लो०। बहि

रंतश्च भूतानां म चरं चरमेव च सूक्ष्म
त्वात्तदविज्ञेयं दूरस्थं चांतिके च तत् ।१५
अर्थ यह अचर अर चर जो भूत है तिन्हों
के अंतर बाह्य है सूक्ष्मत्वते सो अवि
ज्ञेय है दूरस्थित है च पुनः निकट है ॥
भावु ये सकल जो चर जीव है तिनके अं
तर जो आभास बुधि इंद्रियादि अर ते
से अस्थमांसादि जो पदार्थ है अर बा
ह्य जो सांग शरीर है अर तैसे जड पदा
र्थों के बाह्यांतर उपादानत्व कर सोई
है ज्ञेय व्याप्या है अथवा बैसं (निर) कहिये आ
धाराध्ये सर्वस्याई है ॥ अर सूक्ष्मत्वते
सो अविज्ञेय है कहिये जो अति सूक्ष्मत्व
ते स्थूल बुधी वो को दृष्टिन हीं आवता बट
बीजवत जैसे बटबीज जो अति सूक्ष्म है

इदं सर्वं यदयमात्मा १ आत्मैवेदं सर्वं १ ब्रह्मैवेदं सर्वं
पुरुष एवेदं विश्वं १ सर्वं खल्विदं ब्रह्म १ १२

सोयद्यपिसकलदासारद्दिविषैव्याप्याहै
परंतुबाह्यदृष्टीतिसकोदेखनहींसक
तैतैसेंआत्माहैसतस्वरूपअरुसर्व
रमिथ्यापदार्थोंमोहूंयद्दिपसत्तारति
सकीहैतोभीस्थूलबुधीजोबाह्यद
ष्टीहैंतिननकोदृष्टनहींआवता।द्रूपके
सतत्वरनिश्चयतोब्रह्मकोअरुनिश्चयहैर
सोश्रुतिः॥इरस्यहैचपुनःनिकटहैकही
येजोपरोक्षअपरोक्षसोईहैअर्थयहस
कलजोमिथ्यापरोक्षअपरोक्षपदार्थहैं
तिनकाद्रष्टाहीउपादानहोताहै।अथवा
यतोवाचानिवर्ततेअप्राप्यमनसासहइस
हेतुतेंदूरतेंदूरहैअरुअपनाआपहैना
तेनिकटहै घटअरुलिद्दूरनिकटअरुति
सोईदृत्यादिप्रमाणोंकरसोईहींज्ञेय
दूरनिकटआपहीहैइति १६ श्लोक

अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिव च स्थि
तं॥ भूतभर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभ
विष्णु च १७ अर्थ यह नहीं भिन्न भिन्न
भूतों विषे अरु भिन्न भिन्न जैसे स्थि
त है॥ भूतों के च पुनः धारणहारा है
सो ज्ञेय है ग्रास कर्त्ता है उत्पत्ति कर्त्ता
है पालन कर्त्ता है इत्ति॥ भाव यह सो ज्ञे
य वा स्तवत्तें अविभक्त है काहेतें जो अ
खंड एक रस अद्वैत है॥ च पुनः सोई
ज्ञेय भूतों विषे विभक्त जैसे दृष्ट आव
ता है एकोहं बहु स्याम इस की रसे ध्यान
भि ता॥ यद्यपि विभक्त दृष्ट आवता है
तो भी वन्न आष्टद एह जरणा वत्ता है जो विभ
क्त संत है अविभक्त है॥ भूतभर्तृ च
कहीये भूतों का आधार रूप है सोई है
असल विना आधार न कोई इत्यादि प्रमा
णाकर

अरु सोई ही ज्ञेय ग्रास कर्त्ता है सोई ही
उत्पत्ति कर्त्ता है सोई ही पालना कर्त्ता है
अर्थ यह है ब्रह्मा विष्णु महेश रूप धार
कर जगत के उत्पत्यादिक का कर्त्ता सो
ई है॥ ब्रह्म अरु जो माया है सोई ही ब्रह्म
के सर्व प्रकार कारणत्व का निरवाहक
है इति श्रुति॥१७ ननु माया जे सकल प्र
कार ब्रह्म के कारणत्व का निर्वाहक होइ
तो प्रेरक माया होई अरु प्रेर्य ब्रह्म होया
ताते ब्रह्म के तम भाव की प्राप्ति अरु मा
या के ज्ञानत्व कर प्रकाश स्वरूप की प्रा
प्त होई इति॥ उत्तर॥ श्लो०॥ ज्योतिषाम
पि तज्ज्योति स्तमसः परमुच्यते॥ ज्ञानं
ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य धिष्ठितं॥१८
अर्थ यह तत् कहीये सो जो ज्ञेय है जो ज्योतियों

१९ मायाकार्यत्वतें जाते माया हूं तमरूपा है सो
तिसका कार्य कैसे प्रकाशस्वरूप होवें॥ मा
यातमः स्वप्रकाशते
का हू जोत है अरु तमतें परें हैं ज्ञान है
ज्ञेय है ज्ञानगम्य है सर्वो के हृदय विषे स्थि
त है॥ भावये तत्व पदस्वउपाधि रवि निष्ठ जो सूर्या
दि जोती हैं अरु त्वं पदस्वउपाधि रनिष्ठ जो बुद्धि
आदि जोती हैं तिन का सोई स्वप्रकाश
(स्वे रूपे भासमान)
चैतन्यही य प्रकाशक है काहेतें जो एह
सूर्यादि स्वतः चैतन्य नहीं अरु स्वप्रकाश
चैतन्य स्वतः प्रकाश सर्व का प्रकाशक है
॥ अरु तमतें परें कह्या है तम जो माया है ति
सतें परे है अर्थ यह अघटना घटपटीयसी
जो माया है सो तिसके आश्रय चातुर्य ति
को प्राप्त है अरु तिस स्वप्रकाश विषे माया
अन्यथा करण को सामर्थ्य नहीं॥ अरु कै
सो ज्ञेय है जो ज्ञान स्वरूप हूं आप है अर्थ यह
ज्ञान ही ज्ञाता स्वरूप है इस प्रमाण तें ज्ञान
ज्ञेय तें भिन्न नहीं तिन का अनुमान हूं है॥

2

ज्ञानं ज्ञेयमतो भिन्न नहीं तत्स्वरूप चैतन्य मता
प्रकाशवत इत्यर्थः॥ अरु ज्ञेय आप है अर्थ यह
शुद्ध ज्ञान कर पाइबे योग्य हूं सोई है॥
अरु बुद्ध ज्ञान कर गम्य जो सर्व पदार्थ हैं
सो हूं सोई ज्ञेय विवर्त भाव कर आप है
अरु सकल जो भूत है तिन के हृदै विषे जी
व रूप हो कर हूं सो ई ज्ञेय रूप तत है इति सा
है अर्जुन इस प्रकार शुद्ध चैतन्य अरु ब
द्धि चैतन्य अरु सकल मायादि ज
उपदार्थ सोई हि ज्ञेय है तु मर निश्चय कर
यो इत्यर्थः॥१८ अब चार प्रश्नों की समाप्
ता को कहते हैं॥ श्लो॥ इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं
ज्ञेयं चोक्तं समासतः मद्भक्त एतद्विज्ञा
य मद्भावायोपपद्यते॥१९॥ अर्थ यह

१३ अ॰ भा॰ टी॰ गी॰ १८

इतने कहिये समाप्त होया क्षेत्र स्वरूप अर
ज्ञान का स्वरूप अरु ज्ञेय का स्वरूप जो सं
क्षेप तें कहा ॥ मेरा भक्त इन को जाण कर
मेरे भाव को प्राप्त होता है ॥ भाव यह इदं श
रीरं इत्यादि श्लोक कर क्षेत्र स्वरूप कहा
क्षेत्र के स्वरूप का हरणो ते क्षेत्र अभिमानी
है अरु तत्साधक है ऐसा जो क्षेत्रज्ञ है ते
स का स्वरूप हूं कहा ॥ अर तेन क्षेत्र क्षे
त्रज्ञ के निर्णय के मध्य क्षेत्र क्षेत्रज्ञयोर्ज्ञा
नं इन कर ज्ञान का स्वरूप हूं दिखाया ॥ अ
र अमानित्व इत्यादि एतत् ज्ञानमिति प्रो
क्तं इत्यंत ज्ञान साधन हूं दिखाये अर अ
नादिमत्परं ब्रह्म इन ते आदि जो ते बाम
रिवि तिष्ठोरति इत्यंत ज्ञेय का स्वरूप हूं दिखा
या ॥ सो मुज कर कहे जो एह सकल स्वरू

पहैं इनको मेरा भक्ति ध्यान कर मेरे भा
वको प्राप्ति होता है अर्थ यह मेरा ही स्वरू
प होजाता है॥ मेरा भक्त कहा ये ज्ञान के सा
धन जो अमानित्वादि हैं तिन्हों संयुक्त है
अथवा तिन्हों का धड़ाभ्यासी है अरु स्वरू
प का साक्षात्कार नहीं ऐसा जो निर्गुनोपा
सिक अथवा धड़ विचारवान ऐसा जो
मेरा भक्त है सो मेरा स्वरूप होता है इति
अलखविद्रुसैवमखेरति॥ १८॥ अब श्रीभ
गवान्‌जी शेष जो प्रकृति पुरुष को प्रश्न
कौ उत्तर है सो कहते हैं॥ श्लोक॥ प्रकृतिं
पुरुषं चैव विद्ध्यनादी उभावपि॥ विका
रांश्च गुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसंभवान्॥
अर्थ ये प्रकृति जो अरु पुरुष जो है ये पुनः
इन दोनों को अनादी जानो॥ विकार जो है गु

तत्पदसंबंधी

न गुण जो हैं सो प्रकृतते उत्पत्तिजाणा॥
भावयह प्रकृत जो माया हैं अरु पुरुष क
हीयेत त्पद ईश्वर सो एह दोनो अनादी हैं
॥जब को पुरुष प्रकृत्ति हैं तब ते सो कृत
जो बूझेक बत्तें॥ वृह कहीयावत अरु जेह
न कों सारद कहीये तो जगत सत्त होता है
अरु प्रकृत्तका अनिर्वचनी स्वरूप है न
हीं सिद्ध होता ताते अनादी हैं॥ अरु रजे
सी ते स्वप्न का आचैतन्य का रत्त जो तब ए
एह दोनो प्रकाश हैं ताते ह अनादी हैं॥
अरु विकार कहीये अरु
गुण कहीये सत्त रज तम एह तीनि सो
एह प्रकृतका कार्य हैं॥ इति २० अब प्र
कृत पुरुष के भिन्न भिन्न क चिन्हको दिखा
वते हैं॥ श्लो॥ कार्यकारणकर्तृत्वे हेतुः

सोवास्तवतें स्तु । असंग अद्वैत है अरु माया धार
कर ईश्वर कहीयत॥ अर्थ यह सर्वज्ञ सर्वेश्वर॥ जो
प्रकृतिरुच्यते॥ पुरुषः सुखदुःखानां
भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते॥२१॥ अर्थ यह कार्य
कारण के करतो विषे प्रकृति कारण क
हीयत है॥ सुष दुःखों के भोगता विषे हे
तु पुरुष कहीयत है॥ भावये कारण म
हतत्व अहंकार पंचतन्मात्रा ये सप्त अ
र कार्य कहीये षोडष दस इंद्रिय पंच विषे
सो इन कार सिधता प्रकृति करे है अर्थ
यह प्रकृति का परिणाम है एहा॥ अरु पुरु
ष कहीये तत्पर ईश्वर सो अल्प उपाधि
के अभिमान कर जीव रूप होया है॥
सोई जीव इष्ट की प्राप्ति अरु अनिष्ट के
परिहार वांछी विषे मन के संबंध कर
सुष दुःखों का भोगता होता है॥ अर्थ यह

इनकर पूर्व जो कह्या सचयो यत प्रभव इन का स्वरूप आगे कहेंगे जो ... दिखाया॥ अ०॥ १०

[illegible]

चेसुषदुःखचमनकेधर्म हैंअरुअध्यासकेवसु
तैंजीवआपनेविषेमानताहैंअहंसुखीअहंदुः
खीअहंपुन्नीअहंपापीइतिअनुवात॥वास्तव मे
जीवकेनहींजीवईश्वरस्वरूपअसंगअनादी
हैजोजीवकेहोतेतोईश्वरसाथजीवकीएके
ताकदाचितनहोती॥आत्माप्यनीदुःसुखदुः
खहेतो॥अरुतेनसुखदुःखभोगणकाका
रणसोईईश्वरपुरुषहैकाहेतेजोजीवस्व-
पकरसोईविवर्तभयाहैं॥जीवस्वरूपधरकी
योप्रवेसु॥२१॥ पुरुषःप्रकृतिस्थोहि
भुंकेप्रकृतजानगुणान्॥कारणंगुण
संगोस्यसदसद्योनिजन्मसु॥२२॥अर्थ
यह पुरुषजोहैप्रकृतिविषेस्थितहोया
भोक्ताहैप्रकृतिजनगुणोंको॥सतअ
सतयोनीकेजन्मविषेकारणगुणोंकासं
गहै इसके

भावये पुरुषः प्रकृतिस्थः कहीये पूर्व नि
रूपित जो चैतन्य पुरुष हे सो प्रकृति वि
षे प्रतिबिंबित हो या प्रतिबिंब
रा प्रकृतिजन्य गुणा कहीये प्रकृति ते उप
जे जो शब्दादि विषय हे तिनका भोक्ता हो
ता हे तिस प्रतिबिंबरूप जीव के सत
असत योनी की प्राप्ति विषे कारण गु
णो का संग हे सत योनी कहीये देवादि
अरु असत कहीये तिर्यगादि सो योनी
को जीव गुणसंग कहीये इंद्रियों के अ
ध्यास ते सुख पावता हे अर्थ यह वास्तव
चैतन्य को जन्मादि नही जे प्रतिबिंब जी
व को हं अध्यास केवल भ्रांति हे वास्तव नही तो
चैतन्य को कैसे हो वे एह के सुत कन्या इहे
२२

अबचैतन्यकेजन्मादिनहींइसरविषेहेतों
कोकहतेहैं।श्लो।का।उपद्रष्टानुमंताच
भर्त्ताभोक्तामहेश्वरः।।परमात्मेतिचा
प्युक्तोदेहेस्मिन्पुरुषःपरः।।अर्थयिह
इनदेहरविषेजोपरमपुरुषहेसोउपद्र
ष्टाहेअनुमंताहेभर्त्ताहेभोक्ताहेमहेश्वर
पुनः हेचपरमात्माहूं तिसकोकहीयतहे।भाव
येइनदेहरविषेजोचैतन्यअरचेष्टानकू
टस्थहेसोउपद्रष्टाकहीयेसाक्षीहेअ
र्थयहबुध्यादिकोकासाक्षीत्वंपदकाल
क्षस्वरूपहेअरअनुमंताकहीयेबुध्या
दिसंबंधीहोयापदार्थोंकाग्राहककेअर
भोक्ताकहीयेआनंदग्राहकसोइनदे
अनुमंताअरभोक्ताकरत्वंपदवाच्य
संबंधीचैतन्यांग्राकहाअरउपद्रष्टाके

भागत्याग
लक्षणाकूर

विशेषणाकर त्वंपदकालक्षप्रत्यगात्मा
कूटस्थचैतन्यकहा॥ अरु भर्ताकही
येसकलकापालक अर्थयहसमष्टरू
पकरसमष्टकाभर्ताईश्वरहीहैअर
महेश्वर इनदोविशेषणाकर ब्रह्मादिको
काहूंईश्वरहै सोइनदोविशेषणाक
रतत्पदकावाच्यअर्थलक्षकहाहैअ
र्थयहभर्ताशब्दकरतत्वंकावाच्यस्वरू पद
पअरमहेश्वरशब्दकरतत्पदकाल
क्षचैतन्यब्रह्म सोभर्तादिउपाधीतें र
हितहूयेतत्त्वंपदजबउपद्रष्टामहेश्वर
कहीयतहैतबदोनोकीएकताकाना
मपरमात्माहूंसोईकहीयतहै॥ अर्थ
यहसर्वअरु सर्वातीतवहीहै॥ तहांप्र
माणहै श्लो०॥ सर्वातीतंरहियत्सर्वं लिंई
रदंदृश्यंदं॥ रचि विलासरतं नित्यं॥
तो

तस्मै सर्वात्मने नमः ॥१॥ इस प्रकार चे
तन्यात्मा के जन्मादि कदाचित नहीं और
भ्रम कर आभास के है जन्मादि ॥ २ ॥ आगे
अब यह कहतें है जो पुरुष औ से प्रकृति पुरुष
के स्वरूप को ज्ञाता होता है सो सर्व विकारों तें र
हित होता है ॥ श्लोक ॥ य एवं वेत्ति पुरुषं
प्रकृतिं च गुणैः सह ॥ सर्वथा वर्तमाना
पि न स भूयोऽभिजायते ॥ २५ ॥ अर्थ यह
जो पुरुषँ इन पुरुष को अरु गुणों सहि
त प्रकृति को जानता है ॥ सो पुरुष सर्व
प्रकार वर्तता हुया हू नहीं फेर जन्म को
पावता ॥ भाव ये पूर्व श्लोक विषे ने रू
पित जो तत्वं पद लक्ष्य परमात्मा है और
गुणों सहित प्रकृति कही थी सो कार्य
माया अरु विद्या ॥ अर्थ यह परमात्मा को

नित्यस्वरूपअरगुणोंसरहितप्रकृत
कोमिथ्याकरलेतअरनित्यस्वरूपजाण
ताहैसोपुरुषसर्वप्रकारवर्त्ताकही
येसगतसरहितवासगतरहितरवेधनबं
धकर्मकेनहोयाहूतिनकर्मोंकाफल
जोजन्मारदेहैसोनहीपावताअर्थयह
आपकोब्रह्मस्वरूपकरनेप्रत्ययकर्त्ताहै।
सोब्रह्मकेकदारचेतजन्मारदेनहीं॥तमेव
विदित्वातिमृत्युमेति॥ज्ञात्वादेवंमुच्यतेसर्व
पाशैरिति॥तिससाक्षातकारवानके
तौलोंसरीरहैजौलोंप्रारब्धकर्मफलभोग
करबंधनातेंनहीमुक्तहोता॥इनतेंपी
छेपरमात्माहोताहै॥२५॥अबवेष्णोकोंकहेह
रतिसआत्माकेजाननेकेप्रकारोंकोक
हतेहैं॥श्लो०॥ध्यानेनात्मनिपश्यंतिके
चिदात्मानमात्मना॥अन्येसांख्येनयोगे

न कर्मयोगेन चापरे॥२५॥अर्थ यह
के ईएक ध्यानकरके आत्माको देखते
हैं आत्मांकर॥अरु और जो है सो ख्य
योगकर और कर्मयोगकर आत्माको
देखते हैं॥भाव ये ध्यान कहीये निर्गुणो
पासना सो रतिसउपासनाके प्रकारको दि
खावते हैं॥मै ब्रह्म हूं इन ही खिबे समान
है॥मै हरि हूं अरु सर्व यह जनार्दन है क
र्यकारका समूह इतेनते अन्य नहीं इति
श्रुतिः अकारं पुरुषं विश्वमुकारे प्रव
लापयेत् उकारं तैजसं सूक्ष्मं मकारे
प्रवलापयेत् १ मकारं कारणं प्राज्ञं चि
दात्मने विलापयेदिति॥सोऽहम् ध्यानो
पासनकर उपासिक पुरुष आपते आ
पखिबे आपको आपकर अर्थ यह अशी
ष्टानात्मा खिबे आपको आपकर देख

१ अर केई एक अष्टांगयोग कर सिद्ध अंगीजो निर्विकल्प समाधि है तिसकर आपकों देखते हैं॥ ६

नेहैं॥ अर अन्यौर जो है सो सांख्ययोग कर आ
त्माकों देखते हैं॥ सो सांख्य का सरूप के
ही यत है॥ देह नाहं श्रोत्रवागादिकानि
॥ नाहं बुधिर्नाहं मध्यासमूलं नाहं सत्या
नेद स्वरूप श्चेदात्मा मायासाक्षी रूप एव
वाहमस्मि॥ १ अर केई एक कर्मयोग कर
आत्माकों देखते हैं कर्मयोग कहीये अष्टां
ग योग सो अष्टांग ग्रान्यौर विषे प्रसिद्ध है
इति २५ श्लोकं॥ अन्येत्वेव मजानंतः श्रु
त्वान्येभ्य उपासते तेपि चातितरं त्येव
मत्युं श्रुतिपरायणाः॥ २६ अर्थ यह उ
पना॥ और इस प्रकार न जानते हुये औ
रो ते श्रवण कर के उपासना करते हैं॥
ते श्रुतिपरायण हु श्रुति श्रवण कर मत्युको
तरते हैं॥ भाव ये और जे केई एक पुरुष हैं
सो इस ध्यान सांख्य योग कों न जानते हुये
कर्म

८ अथवा कर्मयोग कहीये निष्काम कर्म कर अंतःकरण की शुद्धता सो तिस शुद्धता द्वारा आपकों देखते हैं॥ ८

औरतिंइनवीरोंकेप्रकारकोश्रवणकर
केध्यउअधाकरतेहैंसोहूंक्रमकरमृत्यु
कोतरतेहैं इत्यर्थः ॥२६ अबएहकहतेहैं
जोरजेतनेकछुजीवहैंसोक्षेत्रक्षेत्रज्ञके
संयोगतेउत्पत्तेहैं॥श्लोक॥यावत्संजा
यतेकिंचित्सत्वंस्थावरजंगमं॥क्षेत्र
क्षेत्रज्ञसंयोगात्तद्विद्धिभरतर्षभ २७
अर्थयह जोकछुजीवस्थावरजंगम
जीवउत्पत्तेहैं सोक्षेत्रक्षेत्रज्ञकेसंयो
गतेंउपजतेहैं॥भावयह स्थावरजंगम
जोशरीरहैंतिनअभिमानीजोजीवा
भासहैं सोमायांनुप्रहरतेंविद्यात्मायिनं
तुमहेश्वरः इनहींकेरउत्पत्तेहैंभावय
हजैसीतेंमायाकार्यहैंतातेंएहसर्वनाशी
हैं॥२७ अबचैतन्यअविनाशीअनाशी
हैंअरऐसेजानताजोपुरुषहैसोय

ऐसे जो देखता है सो यथार्थ देखता है ॥ २

यथार्थ द्रष्टा है एह कहते है श्लोक ॥ समं स
र्वेषु भूतेषु तिष्ठंतं परमेश्वरं विनश्य
त्स्वविनश्यंतं यः पश्यति स पश्यति ॥ २८
अर्थ यह परमेश्वर जो है सो समान है स
र्व भूतों विषे सो कैसा है तिस सकल भू
तों के नाश से रहित अविनाशी है ॥ भाव यह
परमेश्वर कहीये अधिष्टाता चैतन्य सो
सकल जो परोक्ष अपरोक्ष स्थावर जंगम
भूत हैं तिन विषे सामान है ॥ जे परमेश्वर
सामान है तो जड चेतन का भेद को होता है इसते
चेत्याह आत्मचेतन कर जड चेतन का भेद
नही ईहां भेद का करता अंतःकरण है ज
हां अंतःकरण है तहां चैतन्य जीव कहीते
है ॥ जहां अंतःकरण नही तहां जड कही
ते है ॥ फेर कैसा है परमेश्वर जो तिन सक
ल भूतों के नाश से रहित अविनाशी है ॥ काहे

तेंजोअविकारीकूटस्थहै॥ सत्यंज्ञानमनं
तंब्रह्मइतिश्रुतिः॥ जोऐसेदेखताहैसोय
थार्थदेखताहैभावयहसकलभूतोंकोना
शीअरुआत्माअनाशीजोदेखताहैसो
यथार्थद्रष्टाहैपंडितज्ञानीहै॥२८॥ अब
एहकहतेहैंजोऐसाद्रष्टाजोपूर्वनिरूपे
तहैसोपरमगतिकोप्राप्तहोताहै॥ श्लोक
समंपश्यन्हिसर्वत्रसमवस्थितमी
श्वरं नहिनस्त्यात्मनात्मानंततोयातिप
रांगतिं॥२९॥ अर्थयहसमदेखता
होया [illegible] सर्वत्रसमइस्थित
ईश्वरकोनहींनाशकर्ताआपकोआप
करजोरतिसेहोतातेसोजाताहैपरमगतिको
रति॥ भावयहसर्वत्रकहीयेशत्रुमित्र
विषेसामानजोईश्वरव्यापाहैतिस
कोजोसमानदेखताहैअर्थयहराग
रहि कहीये

इसप्रकारजि
सकोज्ञानघट
होताहै॥ ५

द्वैषनहींकरतारागकहीयेपुत्रादिकविषे
मोहअरज्ञानविषेवधारद्भावनाजोनही द्वैषकहीये
करतासोपुरुषनहीनान्नाकरताआत्मा
करकेआत्माकोअर्थयहमनकेस्वभावों
करआपकोतुछनहींकरताँसोजानाहै
पर्यगतिजोअलपरमोक्षहै॥तहांप्रमा
णहै॥ इहात्मज्ञानवज्ञानं देहात्मज्ञानबा
धकं आत्मन्येवभवेद्यस्य सनेछिन्नपि
मुच्यते॥इतिउपदेशसहस्त्री॥जैसेवृ
क्षभते च्युतपारजोपुरुषहै सोनचह
ताहोयाहू पृथ्वीपररमिडताहै तैसेप्र
कृतपुरुषकाज्ञानानचहताहोयाहमुक्त
होताहै॥२८॥ननुऐसापुरुष...कर्मों
कोकर्ताहो॥उत्तर श्लोका॥ब्रह्मन्येवच
कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः यह
पञ्चरतीनत्यात्मान अकरतारंसपश्यति

३०

प्रकृतिहीसर्वप्रकारकर्मकराईयतहैं॥
जोअैसेदेखताहैअरआत्माकोअकरता
सोयथार्थदेखताहै।भावयहप्रकृतकही
येईश्वरशक्तमायाअथवाअपराप्रकृति
सोईसकलकर्मोकेकरावणहारीहै॥इसी
तेआत्माअसंगसदाअकरताहैजोअैसे
देखताहैसोयथार्थदेखताहैअर्थयह
तत्वदर्शीहै।।३०॥ननुकदब्रह्मकीप्राप्ति
होतीहैतहांश्लोककहतेहैं।यदाभूतपृ
थग्भावमेकस्थमनुपश्यति ततएव
चविस्तारंब्रह्मसंपद्यतेतदा॥३१॥अ
र्थः यद्पृथकभावभूतोंकोएकस्थदे
खताहै अरतिसहीतेसर्वकेविस्तारको
तदब्रह्मकोप्राप्तहोताहै॥भावयहसक
लपदार्थजोपृथवीकेआश्रयहैसोप्रलय
विषेपदार्थोसहितपृथवीजलोंविषे
लयहोतीहैअरपदार्थोसहितजलअ
ग्निविषेअरअग्निवायुविषेवायुआ
काशविषेआकाशअव्यक्तविषेअव्या
कृ

स्त्रीः कलत्र पुरुष आदि विषे अरु दूसरे हीप्र
कार उत्पत्ति काल विषे तिस के विस्तार को
जो पुरुष जानता है सो ब्रह्म को प्राप्ति होता
है॥३१॥ ऐसा ब्रह्म पदार्थ की उत्पत्ति विषे
उत्पत्ति अरु नाश विषे नाश होता है इति चेन्न।
हा॥श्लोक॥ अनादित्वान्निर्गुणत्वात्परमात्मा
यमव्ययः॥ शरीरस्थोऽपि कौन्तेय न करो
ति न लिप्यते॥३२॥ अर्थ यह अनादित्व
ते अरु निर्गुणत्व ते यह परमात्मा अव्यय
है शरीर विषे स्थित हुआ हे कौन्तेय न कर
ता है न लिपायमान होता है। भाव यह जो
पदार्थ सादी अरु सगुण होता है सो पदार्थ
नाश होता है जैसे पृथ्वी आदि भूत अरु दे
ह परमात्मा अर्थ स्वप्रकाश जो सकल तें
उत्तम आत्मा है सो अनादि अरु निर्गुण
भाव तें अव्यय है॥ यद्यपि जीवरूप कर
शरीर विषे प्रवेश होता है तो भी न क
रता है न लिपायमान होता है॥ जे जीव लिपा
यमान ही होता तो परमात्मा कैसे लिपाय

पूर्व कहे के मुनक ना इकर

अब दोइ श्लोकों कर शरीरस्थ देव जू
के असंगत्व अरु स्वप्रकाशत्व कों दृष्टांतों
सहित तिस विस्तार घड करते हैं ॥ श्लो०॥
यथा सर्वगतं सौक्ष्म्या दाकाशं नोपलि
प्यते ॥ सर्वत्रावस्थितो देहे तथात्मानो
पलिप्यते ॥ ३३ अर्थ यिह जैसे सर्वगत आ
काश सो सूक्ष्मत्व तें नहीं लिपाइमान होता ॥
तैसे आत्मा सर्वत्र देह विषैं नहीं लिपाइ
मान होता ॥ भाव एह जैसे एह दृश्य रूप आ
काश सर्वव्यापी है सर्व विषे नहीं लिपाय
मान होता सूक्ष्मत्व तें तैसे अदृश्य अरु
निर्गुण जो आत्मा है सो सर्वत्र देह वि
षे स्थित है ये देह के से लिपाइमान हो
वै ॥ ३३ यथा प्रकाशयत्येकः कृत्स्नं
लोकमिमं रविः ॥ क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृ
त्स्नं प्रकाशयति भारत ॥ ३४ ॥ अ
र्थ यिह ॥ जैसे एक सूर्य इन संपूर्ण

लोककोप्रकाशताहै॥ तैसेहीभारतक्षे
त्रीसंपूर्णक्षेत्रकोप्रकाशताहै॥ भावयह
व्यवहारकरूपप्रकाशजोएकसूर्यहै
सोसंपूर्णपदार्थोंकोप्रकाशताहै औ
सैतिसकररलिपायमाननहीहोताअ
र्थयहरतेनपदार्थोंकेभावाभावरूपपे
सूर्यसामानहै॥ तैसेसंपूर्णपदार्थोक्षेत्र
कोप्रकाशताजोपरमार्थकएकक्षेत्री
है सोकैसेरलिपायमानहोवेअर्थयह
नहीहोताएहकैमुताकन्याइप्रत्यक्षहै
इरति॥३४ अबएहकहतेहैंजोज्ञानचक्षु
रनेक्षेत्रक्षेत्रज्ञकेभेदकाजानताहैसोपर
मपदकोप्राप्तहोताहै॥ श्लोक क्षेत्रक्षेत्र
ज्ञयोरेवमन्तरंज्ञानचक्षुषाभूतप्र
कृतिमोक्षंचयेविदुर्यान्तितेपरं॥३५

इसप्रकारजोज्ञानचक्षुहै क्षेत्रअरक्षेत्र
ज्ञके भेदकोअरभूतोंके उत्पत्तिअर
नाशकोजाणतेहै।।तेपरमात्मपदकोप्रा
प्तहोतेहैं।।भावयहज्ञानचक्षुकहीये
आत्मअनात्मभेददृष्टिजेज्ञानीहै इस
प्रकारकहीयेजैसे इसअध्याइविषेवर्ने
तयेहैक्षेत्रक्षेत्रज्ञके भेदकोंजाणतेहैं
अरभूतोंकोंउत्पत्तिनाशकोंजाणतेहै
सोपरमपदमेंअक्षरस्वरूपहोतेहैं इति
अंतरंगात्मिअनात्मअहंत्स्मि रतिश्री

श्रीभगवानोवाच

उँमनुअबइसचतुरदसोअध्याइविषेत्रयोदसे
अध्याइविषं कहा जो प्रकृतिपुरुषका ज्ञान है
सोतिसज्ञानकाविस्तारक्रमनुअरतिसका
फलकहतेहैं। आदिविषेश्लोकोकरतिस
ज्ञानकीश्रेष्टताकोकहतेहूयेफलकोकहे
गों। श्लो०। परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां
ज्ञानमुत्तमं॥ यज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परां सिध
मितोगताः॥१॥ अर्थ ये ज्ञानोविषेउत्तम
ज्ञानजोपर्म है सो फेर कहताहूं जिसको
जानकेमुनसकलपर्मसिधको [illegible]ते इन
पावतभयेहैं। भावयह ज्ञानानांउत्तमंज्ञा
नेकहीये यज्ञतपउपासनादिइनविषेजो
ज्ञानहैजोपूर्वहिबहूकोविषेकहेहैंसोतिनों
तेउत्तमहै काहेतें जोतिनोतेउत्तमलोकों
कीप्राप्तिहैअरइनतेमुक्तिफलकीप्राप्तिहै
अरपरंकहीयेजिसतेंगुणातीतकीज्ञान
स्वरूप है

१

अपवादतः कहीयेइनज्ञानकेप्रभावतेपरमसिद्धि
जोमोक्षहैतिसकोपावतभयेहैं।।२
जिसज्ञानकोजाणकरमुनकहीयेमननशी
लसोमुनसर्वपरमसिद्धजोतत्वज्ञानहैइसतेंपाव
तभयेहैंअर्थयहबंधनोंतेमुक्तभयेहैंइति१
श्लोक।।इदंज्ञानमुपाश्रित्यममसाधर्म्यमाग
ताः।।सर्गेपिनोपजायंतेप्रलयेनव्यथंतिच
२ अर्थयहइनज्ञानकोआश्रितहूयेमेरे
साधर्म्यकोप्राप्तिभयेहैं।।सर्गविषेनहीं हैं
उत्पत्तिहोतेअरप्रलयविषेनहींपीडाकोपा हैं
वते।।भावयेपूर्वश्लोकविषेजोकहाहैदेह
बंधनोंतेंमुक्तिहूयेहैंसोईईहांदिखायाहै
जोइनज्ञानकेआश्रयकरजन्ममृत्युकी
जोपीडाहैतिसतेंखिइनैमुक्तभयेहैं।अर
मेरेसाधर्म्यकोप्राप्तिभयेहैंकहीयेजैसे
मैंजगत्उत्पत्तिपालनादिकर्मकर्त्ताहूंअर
सदाअसंगअकर्त्ताहूं।।तैसेयहदेहसंब
धीकर्मकरतेसंतेहूंआपकोअसंगअउ
दासीनमानतेहैंकाहेतेंजोईहांदिसकलज
गतकोतिनआपविषेकल्पितमान्याहै

अब दोइ श्लोकों कर कार्यरूप भूत अर
तिन के कारणों को दिखावते हैं। श्लो०॥ मम
योनिर्महद्ब्रह्म तस्मिन्गर्भं दधाम्यहं॥
संभवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत ३
अर्थ यह मेरी शक्ति जो महद्ब्रह्म कही है मा
या है तिस विषे गर्भ को धारता हूं मैं उत्पत्ति
सर्वभूतों की तिससे होती है हे भारत॥ भाव
यह अधिष्ठान रूप चैतन्य जो मैं हूं तिस की
आभास माया विषे पड़ता है अर्थ यह चैतन्य
ता को अपणा स्वभाव है तिस विषे जब बल
को देता हूं तब सकल भूत उत्पन्न होते हैं भाव
यह जब अपुरुष विषे संचित संवेदन उठती है
तब सकल भूत उत्पत्ति होते हैं उत्पत्ति कहिये
जैसे आदित्य तो किरणों का प्रकाशती है॥ ३॥
सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः संभवन्ति याः॥
तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता ४
अर्थ यह सर्व योनी विषे हे कौन्तेय मूर्तियां जो

अर्थ यह कहितन आदि तमगुण जीवकोबांधते हैं

उत्पत्ति होत्त हैं तिन्हों का महत्‌ब्रह्म योन है अरु
मै बीज दाता पिता हों भाव ये शिव शक्ति रूप
ये सकल विश्व है तिन विषे जो स्त्री योन है
सो सकल शक्ति रूप है अरु जो पुरुष स्व
रूप है सो सम शिव स्वरूप है तिन्हों इस्त्रीयों
सकल्यों विषे जो शक्ति रूप है शिव स्वरूप
जो पुरुष है वीर्य दान करते हैं तिन ते भू
तों की उत्पत्ति होती है सो तिन्हों भूतों का आ
धार शक्ति है अरु बीज दाता पिता मे हों ॥ मा
यां प्रकृतिं विधा न मायिनं तु महेश्वर: इत्ते
श्रुति: ॥४॥ अब एह कहत्ते हैं प्रकृति पुरुष
स बंधते जो उत्पत्ति भूत हैं सो यद्यपि असंग
शुद्ध स्वरूप है तो भी प्रकृत जन्य जो सत्वादि
गुण हैं सो तिन्हों भूतों को बंधमान वत
करते हैं ॥ श्लो० ॥ सत्वं रजस्तम इत्ति गु
णा प्रकृति संभवा: ॥ निबध्नंति महाबाहो
देहे देहिनमव्ययं ॥५॥ अर्थ यह सत रज
तम ये ह गुणा प्रकृति ते ते उत्पत्ति है

सो बांधते हैं हे महाबाहु देह विषे देही अ-
व्ययको ॥ भाव यह सच्चिद्रूप चैतन्यरूप जो
देही है सो अव्यय है काहेतें जो तिसके देहसं-
बंधनात्मक नहीं इसलिये जन्ममृत्युतें रहित
है जन्ममृत्यु देहके है तो भी अज्ञानकी प्रबल-
तातें कहे हैं ये जो गुण है सो अपरोक्ष अपने
स्वभावो अनुसार देहके साथ अध्यासकं
के देहके धर्मों विषे अभिमानी करते हैं ॥
अब जन्ममृत्युको देते हैं इत्ति प अब सो गु-
ण जो अपने अपरोक्ष धर्मों करि देहीको बांध-
ते हैं तिन्होंको प्रगट कर दिखावते हैं श्लो०
तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात् प्रकाशकमनामयं
सुखसंगेन बध्नाति ज्ञानसंगेन चानघ ॥६॥
अर्थ हे निष्पाप तहां सतगुण निर्मलत्वतें प्रकाशक
अरु अनामय है सो बांधता है सुखसंबंध-
नें अरु ज्ञानसंगनें हे अनघ ॥ भाव यह सतो

९

ˇअरज्ञानेंदुवघ ४

गुराजोहेसोनिर्मलस्वरूपहैकाहेतेंजो
आत्माकेजनावरणेकाकारणहैइसनिर्म
लहेनतेंप्रकाशककहेअर्थयहसतगुण
कापरिणोअंत:करणहैसोसकलपदर्थौ
कोंसोईप्रकाशतेहैंअरअनामयकही
येरोगतेंरहतहेसतगुणरोगकहीयेनी
चयोनीसोतेनकानिवर्तकहै॥अरसका
मतपपयज्ञादिविषेजोजोउतहैअरस्व
र्गादिपुन्यलोकोंकाप्रापकहैतातेंसुख
ˇकर अरज्ञानसंगबांधताहैसतगुण ६ श्लो०॥
रजोरागात्मकंविद्धि तृष्णासंगसमुद्भवं॥
तन्निबध्नातिकौंतेयकर्मसंगेनदेहिनं॥७॥
अर्थयहरजगुणरागस्वरूपजाण तृष्णा
संगसमुद्भवहै सोरजगुणबांधताहैहेकौं
तेयकर्मसंगकर देहीयांको॥भावयह
रजगुण[illegible]रागकहीयेकामनास्व
रूपहै अरतृष्णासंगउत्पत्तिहोवै तृष्णा
कहीयेधनपुत्रस्वर्गादिलोकरनविषेकामना
ˇअर२ ˇकौं२ ˇसतो२

Left margin: हियेअहंकरस्वार्थ; कर्मसंग

अरु संग करि संग कही पूर्व कहे धनादिक कौ विषे संसक्ता।
सो इन्को करि सो ई रजगुण देहवान को
सो इन कामना करि सकाम कर्मों विषे जोड़ता
है तिन कर्मों करि देही को बांधता है॥७॥ श्लो०
तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्व देहिनां॥ प्रमा
दालस्य निद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत॥८॥
अर्थ यह तमोगुण अज्ञान ते उत्पत्ति है अरु
मोहन है सकल देहियों का प्रमाद आलस्य
निद्रा करि सो बांधता है हे भारत॥ भावये
तमोगुण अज्ञान तें उत्पत्ति है अर्थ यह अज्ञा
न का स्थूल स्वरूप है अरु सर्व भूतों का मो
हन हारा है काहे ते जो निद्रादिकों सकल
जीव प्राप्ति होते हैं॥ प्रमाद आलस निद्रा
करि सो तमोगुण देहियों को बांधता है॥
प्रमाद कहीये बुद्धि को गमता भाव की प्रा
प्ति अरु आलस कहीये शरीर के गुड़त्व
भाव की प्राप्ति होवै॥ अरु निद्रा कहीये
वृत्ति की शून्यता इत्यर्थः॥८॥ श्लोक १॥

श्रीरामजी

सत्वंसुखेसंजयति रजः कर्मणि भार
त॥ज्ञानमावृत्यतुतमः प्रमादेसंजयत्युत॥
अर्थयेसतगुणसुखविषेजोडताहेअरर
जोगुणकर्मविषेजोडताहे॥ अरतमगुणजो
हैज्ञानकोआवर्णकरकेप्रमादविषेजो
उडताहेएहविचारहै।भावयेसतगुणज
बउदेहोताहेतबवरतिसुखभावकाग्रह
णकरतीहैअरजबरजोगुणउत्पतिहो
कर्म ताहेतबकरणेकीइछ्याहोतीहै अर
तमगुणजबउदेहोताहैतबज्ञानकोआ
वर्तकरकेअर्थयेयहबुद्धकोमलनकर
प्रमादविषेजोडताहे। इहविचारहेअ
र्थयेएहइनकेभिंनरभिंन्नधर्महैइत्यर्थः
९॥श्लो०॥रजस्तमश्चाभिभूयसत्वंभ
वतिभारत॥रजःसत्वंतमश्चैवतमः
सत्वंरजस्तथा१०अर्थयेरजतमको
अधीरकरसतगुणहोताहेहेभारत॥

अर अब सतोगुणादिकों की वृद्धताके चिन्हों को क

हते हैं आदि विषे सतोगुणादि की वृद्धता को दिखावते हैं ५

रजगुण सतगुण तमगुण को आछादक होता है। तमगुण सतगुण रजगुण को आछादक होकर स्थित होता है। भाव यह जो जो गुण उदे होता है सो औरों को आछादक कर स्थित होता है। १०॥ श्लो० सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन्प्रकाश उपजायते॥ ज्ञानं यदा तदा विद्याद्विवृद्धं सत्वमित्युत॥ ११॥ अर्थ यह जिस काल विषे ज्ञान तब सतगुण की वृधजानिए सर्व इंद्रियों विषे प्रकाश उपजावता है। भाव यह सकल जो ज्ञान इंद्रिय हैं तिन विषे जो ज्ञान है सो सतगुण का स्वभाव है॥ औसें रजगुण की वृद्धि कहते हैं॥ १२ श्लो० लोभः प्रवृत्तिरारंभः कर्मणामशमः स्पृहा॥ रजस्येतानि जायंते विवृद्धे भरतर्षभ॥ १२॥ अर्थ यह हे भरतर्षभ रजगुण की वृधि विषे एते उत्प

अब रजगुण की वृद्धि के चिन्ह कहते हैं ५

त्तिहोतेहैं॥ लोभजोहै प्रवृत्तिजोहैआ
रंभजोहै कर्मोंका अशमभा
वजोहै और स्पृहाजोहै॥ लोभ यधना
दि आपके प्राप्तिसेंभी अधिक अरु घ
केधनादिकी चाह प्रवृत्ति कहीयेनित्य
का उद्यम रखना॥ कर्मणामारंभः कहीये
हदेहआदिकविषसदैव उद्यमवान॥ अ
शम कहीये अशांतता स्पृहा कहीये
सदैवेछा॥ सोएह पंच रजगुणकीवृ
धिविषे होतेहैं १२ श्लो० अप्रकाशो
प्रवृत्तिश्च प्रमादो मोह एव च तमस्ये
तानि जायंते विवृद्धे कुरुनंदन॥१३
अर्थ ये अप्रकाशजोहै प्रवृत्तिजोहै
प्रमादजोहै मोहजोहै तमगुणकी
वृधिविषे एह उत्पत्ति होतेहैं हे कुरुनंद
ने

[illegible]

अप्रकाश कहीये विवेक आदिको का अभा
व॥ अप्रवृत्ति कहीये निरोद्यम प्रमाद क
हीये विपर्यय निश्चय मोह कहीये स्त्री पुत्रा
दि विषे अधिक प्रीति सो एह चार स्वभाव
तमोगुण की वृद्धि विषे होते हैं॥ सो एह जो
सत्वादि गुणो के कार्य कहे हैं सो इन्हों कर
एह जाणना जो जो वृत्ति जिस जिस स्वभा
व को लीये वर्तै सो तहां तहां तिस स्वभावो
के कारण सत्वादि गुणो का विचार कर
के तम रज को घटावणा अर सत्वगुण को व
धावणा॥ अथवा सर्वदा ही गुणो के कार्य वि
चारणे आपको असंग जान कर अलेप
रहणा॥ २२ अब दोषों को कर एह कहते
हैं जो जिस जिस गुण की वृद्धि विषे देहाभि
मानी शरीर को त्याग करते हैं सो तिन्हों गुणो
के अनुसार लोकों को प्राप्त होते हैं॥ श्लो०

यदासत्वेप्रवृद्धेतु प्रलयंयातिदेहभृत्
तदोत्तमविदांलोकानमलान्प्रतिपद्यते
१४ अर्थयहजोसकालविषेसत्वगुणकी
वृद्धिविषेमनुष्यकोप्राप्तिहोताहैदेहधारी।।
तदउत्तमवेत्तअमलोकेलोकोकोप्राप्तिहो
ताहै।।भावयेसत्वगुणकीवृद्धिविषेजबपु
रुषदेहकात्यागकरताहैतबअपरोक्ष
मकर्मोकेअनुसारउत्तमवेत्ताकहीये
ईश्वरपराङ्गणअरअमलकहीयेर
जतमभावतेरहितहैंऐसेजोइंद्रादिदे
वताहैंतिन्होकेलोकोकोप्राप्तहोतेहैं।।१४
श्लो०।।रजसिप्रलयंगत्वाकर्मसंगिषु
जायते।।तथाप्रलीनस्तमसिमूढयोनि
षुजायते।।१५ अर्थयह रजगुणविषे
मनुष्यकोप्राप्तिहोयाकर्मसंगीयोविषे
उत्पत्तिहोतेहैं।।तैसेतमगुणविषेमनुष्य

उत   योनीकोपाव

होतमूढयोनीविषेंउत्पत्तिहोतेहैं॥ भावयेरज नेहै ५
गुणकीवृधविषेजबपुरुषदेहकात्यागक
रतेहैंतबतदकर्मसंगीमनुषोंकेगेहोंविषे
जन्मकोलेतेहैं॥ अरजबतमगुणकीवृध
विषेदेहोंकोत्यागतेहैंतबपशुआदिकअथवा
मूर्षमनुषोंकेग्रेहोंविषेजन्मकोपावतेहै
भावये एहजोत्रयगुणहैसोभिन्नभिन्न
भीहोतेहैं परंतुबहुधामिश्रितहोतेहैं॥
सोदेखावतेहैं अथसतगुण१सत
गुणरजगुणमेंमिश्रित२सतगुणतमगु
णमेंमिश्रित३ अथरजगुण४रजगुण
सतगुणमेंमिश्रित५रजगुणतमगुणमि
श्रित६ अथतमगुण७तमगुणसतगु
णमेंमिश्रित८तमगुणमेंमिश्रितरजगुणों
सोएहतीनिगुणमेंमिश्रितहोयेनवप्रकार
केहोतेहैं॥ सोअपनेअपनेकर्मोंकिअ

स्वनुरूप जो कर्म हैं तिन्हों को॥२

अनुसार योनी अरु लोकों को प्राप्त होते हैं १५
॥अब तिन गुणों के फलों को कहते हैं श्लो०
कर्मणः सुकृतस्याहुः सात्त्विकं निर्मलं
फलं रजसस्तु फलं दुःखमज्ञानं तमसः
फलं॥ अर्थ ये सुकृती जो कर्म हैं तिन का
फल सात्त्विकी कहा है॥ अरु राजसी कर्मों
का फल दुःख कहा है अरु तामसी कर्मों
का फल अज्ञान कहा है॥ भाव ये सतगु
णको अंगीकार करके जो सात्त्विकी सु
कृती कर्म करता है तिस का फल सात्त्विकी
अरु निर्मल होता है॥ सात्त्विकी कहीये ब
जते हैं सुष जैसे सुख है अरु निर्मल कही
ये ज्ञान साधन हैं जैसे सखे हैं॥ रजगुण
के संबध कर के रचे जे कर्म हैं तिन का फ
ल दुःख है अर्थ यह राजसी भोजनादि
गी के करने तें तप को रांदि जे रोग हैं तिन
कर कष्ट की प्राप्ति होती है॥ अरु तमगु

लीकर्मो का फल अज्ञान है अर्थ यह मू
उ योनी ॥१६॥ अब सत्वादि गुणों के कार्य
कहते हैं ॥ श्लो० ॥ सत्वात्संजायते ज्ञानं र
जसो लोभ एव च ॥ प्रमादमोहौ नमसो भ
वतोज्ञानमेव च ॥ १७ अर्थ यह सतगुणों
सो ज्ञान उपजता है अरु रजगुणतें लोभ चप
नः ॥ अरु तमगुणते प्रमाद मोह अरु अज्ञा
न होता है ॥ भाव यह जो शुद्ध सतोगुण होवे
तो स्वस्वरूपज्ञान रूते सतै होता है अरु जो रम
श्रीत सतगुण होवे तो उपासना अरु क
र्मो का ज्ञान होता है ॥ अरु रज करि लोभा
दि उत्पत्ति होते हैं ॥ अरु तमगुणते प्रमा
द आदि उत्पत्ति होते है सो तिन प्रमादआ
दि को का स्वरूप आगे कहा है ॥ १७ अब
सैई कहते हैं ॥ इन गुणों के अनुसार लो
कों की प्राप्ति है ॥ श्लो० ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्व
स्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसा जघन्यगुणवृ
त्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः ॥१८॥ अर्थः

ऊँचनीचवर्णनदिखे वर्त्तते

सत्त्वगुणविषेस्थितऊर्ध्वकोजाते हैंअ
ररजगुणविषेस्थितमध्यविषेप्रा
प्तिहोते हैं।अरतमगुणविषेस्थितहो
ये।अधःकोजाते।हैंतमगुणी।।भावये
सतगुणीजोशरीरकात्यागकरजाता
है सोसतगुणकीतारतम्यताते स्वर्गआ
दिलोकोंकोप्राप्तिहोताहै।।अररजगुणी
पुरुषरजगुणकीतारतम्यतेमर्त्यलोक
विषेंमानुषजन्मपावताहै।।अरतमगु
णीपुरुषतमकीतारतम्यताते अधः
लोकोंविषेजन्मकोपावता है।।सोएह
जोपंचमश्लोकतेलेकरअष्टादशवेंश्लो
कपर्यन्तजोचौदहश्लोकहैंतिनकरजो
सत्त्वादिगुणोंकाकार्यजोकर्महैअरतिं
नकर्मोंकेजोफलहैसोसकामीपुरु
षकेकहेहैंजोसकामीपुरुषइनगुणों
केसंबंधकरसुखदुःखअरजन्ममृत्यु

ऊंचनीचयोनीकोंपावतेहैं सो एह सकामी
पुरुषोंकाक्रमकरहिके अबजोइनतेंनि
वर्तहोये [illegible] हैं ऐसेजोशुद्धसात्त्विकी
हैं तिन्होंकाप्रकारदेखावतेहैं ॥ श्लोक ॥ ना
न्यंगुणेभ्यः कर्तारं यदाद्रष्टानुपश्यति
गुणेभ्यश्चपरंवेत्ति मद्भावं सोधिगच्छ
ति ॥ १९ ॥ अर्थ यह जैसकालविषे द्र
ष्टा गुणोंतें कर्त्ता औरअन्य नहीं देखता ॥
अरुआपकोगुणोंतेंपरे देखताहै सो
मेरेभावकोंप्राप्तहोताहै ॥ भावयेह जो
आचार्यजोगुरु हैं तिनतें श्रवणकरके
जेवाक्यहैं तिनवाक्योंके मननद्वाराआप
कोंगुणोंकाद्रष्टासाक्षीमान्याहै सोद्रष्टा
जबगुणोंहीकोंसकलकार्योंकाकर्त्ताअ
रु करावतेहारामानताहै औरतिनतेंअ
न्यकर्त्तारनहींमानताअरुआपकोंगुणा
तीतमानताहै अर्थयहगुणोंजोदेहइंद्रियादिकहैं
अरुतिन्होंकेकार्य

सो दुःखों को स्पर्श नहीं करते।। तातें दुःख सुखों
तें परे हैं। ऐसे देखता है सो मेरे भाव को प्राप्त
होता है।। अर्थ यह जैसें मैं गुणातीत अकर्
ता अभोक्ता हूं तैसे हो रहता है इति।। १९।।
किंच।। गुणानेतानतीत्य त्रीन् देही देहस
मुद्भवान्।। जन्ममृत्युजरादुःखैर्विमुक्तो
ऽमृतमश्नुते।। २०।। अर्थ यह जब देही देह
तें उत्पन्न भये इन तीन गुणों को उलंघ रहता है
तब जन्म मृत्यु जरा दुःखों तें मुक्त अमृत
को भोक्ता है।। भाव यह देही कहीये देह संबंधी
जो ज्ञानी पुरुष है सो जब इन तीन गुणों
के कार्यों विषै असंग वर्तता है तब मेरे भा
व को प्राप्त होता है।। २०।। इस प्रकार गुणा
तीत पुरुष के लक्षणों को श्रवण करके अ
र्जुन प्रश्न करे है।। अर्जुनोवाच।। कैः।। कै
र्लिंगैस्त्रीन्गुणानेतानतीतो भवति प्र
भो।। किमाचारः कथं चैतांस्त्रीन्गुणान
ति वर्तते २१

अर्थ

स्तैन रचित ज्ञावान होयाइन तीन गुणों में तें उलंघित वर्तता है हे प्रभो॥ अर कौन आचारवान होया अर कैसे इन तीन गुणां को उलंघ वर्तता है इस्ते॥ भाव यह गुणातीत के कौन लछण हैं अर कौन आचार है अर स्तैन उपावां कर गुणातीत होता है इती तीन प्रश्न॥२१॥ इन अर्जुन के तीन प्रश्नों को श्रीभगवान जी श्रवण कर के अब एक श्लोक कर गुणातीत के लछण कहते हैं अर तीन श्लोकों कर गुणातीत का आचार कहते हैं अर एक श्लोक कर उपाय कहते हैं इस्ते॥

श्रीभगवानोवाच॥ प्रकाशंच प्रवृत्तिंच मोहमेवचपांडव न द्वेष्टि संप्रवृत्तानि न निवृत्तानि कांक्षति॥२२॥ अर्थ यह प्रकाश जो है प्रवृत्ति जो है अर मोह जो है हे पांडव नहीं द्वेष कर्ता तिन की प्रवृत्ति विषे अ

रनस्तिनकीनिवरतिकोचहताहै।।भावये।।
पूर्वइसअध्यायविषेएकादशश्लोककर
कहाजोसतगुणकाकार्यहैअरद्वादशश्लोवें
त्रयोदशश्लोकविषेकहाजोरजगुणतम
गुणकाकार्यहैसोतिन्होंप्रवर्तिसेंतिदू
षनहींकरताअरनिरतिओंकीनिवर्त्ति
कोचहताहै।।अर्थयहइनकोगुणकार्य
जाणकरअरआपकोगुणातीतदेख
करएकरसरहताहैसोएहीगुणातीत
केचिह्नहैं।।इतीअवआचारकहतेहैं।।
श्लो० उदासीनवदासीनोगुणैर्योनविचा
ल्यते गुणावर्तन्तइत्येवं योवतिष्ठतिनेंग
ते।।२३अर्थयहउदासीनवतस्थित
होयागुणोंकरजोनहींचलायमानहो
तागुणहीसवर्तितेहैंऐसेअनुभवक
रीजोस्थितहोताहैसोनहीं।इंगताइति

भाव यह वर्त्तता है ईहां उदासीनतोंमि

नकोजनावना है सो उदासीनवत् रस्थि

त होया गुलोके कार्यविषे जो नहीं चला

यमान होना अर्थ यह सुष दुःखकी प्राप्ति

विषे जो आपको सुषी दुःखी नहीं माने

ता सो ऐसे कैसे निष्कैवक ही है जो गुणका कार्य

जो अंतर बाहर कर रह्या है सो गुणका कार्य

जो विषे है तो भी विषे वर्तते हैं और तिसो

का फल जो सुषदुःख है सो भी तिन गुणका

कार्य बुधादिकोंके है मैं दृष्टा अलेप हूं इस

प्रकार भावना करता जो पुरुष है सो न

ही हमे उतो अर्थ यह सुष दुःखकी प्राप्ति

विषे सम रहता है इति ॥ २२ किंच ॥ स

मसुखदुःखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकां

चनः ॥ तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिंदा

त्मसंस्तुतिः ॥ २४ ॥ अर्थ यह सम है दुःख

:॥सुख जिसके और दुख्ख तुल्य है सम है लो
ष्ट पथर और कांचन जिसको तुल्य है प्रि
य और अप्रिय जिसके और धीर है और तुल्य
है आपकी निंदा उस्तुति विषे॥ भाव यह
इत्यादि सकलों को गुणका कार्य और मिथ्या
करि जानि निश्चे कर के समान रहना है॥
सुख कहीये इष्ट की प्राप्ति ते हर्ष वृत्ति और
दुःख कहीये अनिष्ट की प्राप्ति ते द्वेष वृ
त्ति और दुख्ख कहीये अत्यंत कष्ट चित्त
चलायमान नहीं होता और समान है तुछ
पदार्थ और उत्तम पदार्थ जिसके तुछ क
हीये पथर और मोती और उत्तम कहीये
स्वर्ण और तुल्य है पुत्रादि प्रिय और शत्रु
पुत्रादि अप्रिय जिसके और धीर है क्या
मानापमान जिसके समान है और सभा
न है आपणी निंदा उस्तुति विषे निंदाक

हायेनूानूकरकहेजोअल्पदोषोंकोबहु
तकरकहताबाक्यहैंअरउस्तुतकहीये
तद्दरविप्रीतिलकृरगइहतै॥२४॥रकिंच॥
श्लो०॥मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्योरमि
त्रारिपक्षयो:॥सर्वारंभपरित्यागीगु
णातीत:सउच्यते॥२५॥अर्थयहतुल्य
हैमानअपमानरजिसकेअरतुल्यहैरमित्र
अरअरपक्षरजिसकेसर्वारंभपरित्या
गीहैगुणातीतसोकहायत्तहै॥भावयेमा
नअपमानकोसमानजाणाकेअर्थयहजग
तसंबंधीजाणाकेअररमित्रशत्रुकोसमा
नजाणाकेअर्थयहचेतन्यआत्मासर्वत्रवि
षेव्यापीजाणाकेसर्वारंभकोपरित्यागी
हैअर्थयहजगतविषेसर्वमेरासंभावनक
रेतिन्हाकोईनकरेअररमित्रकोसुखीरा
खेअरशत्रुकावधकरेइनअरंभोका

जो पुरुष कर्त्तृत्व कर परित्यागी है सो गुणातीत
कहीयत है॥२५॥ अब अर्जुन कर कस्या
जो तीसरा प्रश्न है जो कैसे उपावों कर गु
णातीत होता है इनका उत्तर श्री भगवान
जी कहते हैं॥ श्लो०॥ मां च यो ऽव्यभिचारे
ण भक्तियोगेन सेवते स गुणान्समती
त्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते २६ अर्थः
मो को जो अव्यभिचारी भक्ति योग क
र सेवता है सो इन गुणों को उलंघ कर
ब्रह्म होवणे तांई योग्य होता है॥ भाव यें
अव्यभिचारी कहीये जो कदाचित पर
णाम को न पावे ऐसो जो भक्तियोग है ति
स कर जो भगवान को सेवता है अर्थ यह
निर्गुण ब्रह्म को निर्गुणोपासना कर सादे
व सेवता है सो पुरुष ब्रह्म कहीये शुद्ध खि
ख्यिं भाग में चैतन्य के स्वरूप को पावता है॥

इन गुणों को उलंघ कर के॥ अर्थ यह माया कार्य त्तते माया
वत् रमिथ्या अनिर्वचनी रेनि श्चय कर के॥ ब्रह्म होवणे ते यो
ग्य होता है

सोरतिस

अबकहतहैंसेवे ॥ तेजोब्रह्मतो
कहतेहैं॥ श्लो० ॥ ब्रह्मणोहिप्रतिष्ठाहमम
मृतस्याव्ययस्यच॥ शाश्वतस्यचधर्मस्य
सुखस्यैकांतिकस्यच॥२७॥ अर्थयि
मैईहीब्रह्मकीमूरति हूं और अव्ययअम
तकीमूरति हूं और शाश्वतधर्मकीमूरति
हूं और ऐकांतिकसुखकीमूरति हूं इति॥
भावयेब्रह्मकहीयेवेद सोतिसवेदकाजोता
त्पर्यहैतिसकाखरूप स्थूलरूपधारकर
मैहीस्थितहूं और अव्ययअमृतकहीयेस्वरू
पज्ञानसोतिसअमृतकेंजोनरूपकरकहते
काएहअर्थहोजानहै अमृतकोजोपानकरता
है सोमृत्युतेंरहितहोताहै सोअव्ययअमृतहै परंतु
काहेतेंजोबहुकालदेवताहोयाभोगोंकोभोग
करगिडताहै अथवापुण्यकरकेनाशकोपा
वताहै॥ औरएहजोज्ञानअमृतहै सोमृत्य

जो स्वस्वरूप ते प्रमादी होया जीवत भाव
को प्राप्त होवता है इस तें स्वरूप मुक्त के कर
ता है अरु अव्यय है अव्यय कहीये पुनः जी
वत भाव को नहीं प्राप्त करता इति अरु शा
श्वत धर्म की मैं मूर्ति हूं शाश्वत कहीये नि
रंतर सो जीवेश्वर की एकता नाम है सो
इस एकता को शाश्वत इस हेत कहा है जो
इस एकता का नाश कदाचित नहीं अरु औ
र धर्म सभ भेद वान हैं अरु जो तें जीवेश्वर
स्वरूप चैतन एक है भेद पारधी की प्राप्ति सं
तें चैतन्य में द्वैत कोन हीं पावता सो इस की मू
र्ति हूं मैं स्थित हूं अरु ऐकांतिक सुख की
मूर्ति हूं मैं स्थित हूं ऐकांतिक सुख कहीये लहु
स्वरूप आनंद जिस को पुरुष लेवे ऐकांतिक
व्याप अचल स्वरूप का रूप कहते हैं ताते जो
कोई ऐकांतिक मेरे योग करके मो को सेव
ता है सो मेरा स्वरूप होता है इति श्री चतुर्द
शोध्याय: १४

गीता सटीक भाष्य

तहां आसुरि खिखेतान श्रो
को कर दैवी संपत के लक्ष
ण
कहते है

ॐ ॥ पूर्व अध्याय के अंत विषे जो कहा है
एतद्बुद्ध्वा बुद्धिमान्स्यात् कृतकृत्यश्च
भारत ॥ तिस बुद्धिमानता की प्राप्ति निमि
त इस षोडशे अध्याइ विषे दैवी आसुरी
संपत के लक्षण कहते है सो इन के कहने
का एह प्रयोजन है जो दैवी संपत्त को वधावै अ
रु आसुरी को घटावै ॥ श्रीभगवानोवाच
॥ अभयं सत्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यव
स्थितिः दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्याय
स्तप आर्जवं ॥१॥ अहिंसा सत्यमक्रोधस्
त्यागः शांतिरपैशुनं ॥ दया भूतेष्वलोलु
प्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलं ॥ तेजः क्षमा धृ
तिः शौचमद्रोहो नातिमानता ॥ भवं
ति संपदं दैवीमभिजातस्य भारत ॥२

है जो है ७

अर्थ यह अभय जो अंतःकरण की शुद्ध
ता जो है ज्ञान योग विषे स्थित जो है दान जो
है दम जो है पुनः यज्ञ जो है स्वाध्याय जो है तप
जो है आर्जव जो है ॥१॥ अहिंसा जो है सत्य जो
है अक्रोध जो है त्याग जो है शांति जो है अपैशु
न जो है दया जो है भूतों विषे अलोलुप्त्व जो है मा
र्दव जो है ह्री जो है अचापल ॥२॥ तेज जो है क्ष
मा जो है धृति जो है शौच जो है अद्रोह जो है नाति
मानता जो है ॥ हे भारत दैवी संपदा कर
उत्पन्न पुरुष के एह गुण होते हैं ॥३॥ अब इ
न सबों के अर्थ करते हैं ॥ अभय कहीये भ
यनें रहित होवणा सो भय है तां भावना होता
है तिन्हां एह विचारणा एकमेवाद्वितीयं ब्र
ह्म ॥ सत्त्व संशुद्ध कहीये अंतःकरण की शु
द्धता सो तिन्हां एह विचारणा ने ईश्वर के
चन ॥ ज्ञान योग व्यवस्थिता कहीये ज्ञान वि
षे स्थित रहणा सो दिखावे है अहं ब्रह्मास्मि

ग कन्या ने सार अन्नादि अधिकारियों को
दान कहीये देणा अथवा शिष्यां के अज्ञा
न का उपदेश का करणा ॥ अथवा देवत्यां को यज्ञो
करि के पूजन करणा ॥ नहीं भावना करणी सर्व
स्वरूप्ये ब्रह्म ॥ दम कहीये इंद्रियों का रोक
णा सम मा शत्रु मित्र न मानणा न रखे तां नहीं होइ
वे हाली का न हानि कोई ॥ यज्ञ कहीये निःका
म होया देवतां निमित्त अथवा यज्ञ भगवान
सर्वव्यापी हे ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविः इत्यादि ॥
स्वाध्याइ कहीये वेदां का पठन सो सन्यासी का
नित्य कर्म हे सो वेदां का तात्पर्य एह ब्रह्म सत्य
है जगत मिथ्या है जीव ब्रह्म अभेद हैं ॥ तप क
हीये मन इंद्रियां का रोकणा मन इंद्रियां की
एकाग्र परमं तपः ॥ आर्जव कहीये सूधा भा
व नहीं आरंभ परिणाम संघात जो वादहे तिस
कों का त्याग स्ववर्तभाव का अंगीकार करणा
॥ अहिंसा कहीये हिंसा न करणा सो तहां
मैं ब्रह्म नहीं जीव हूं इस भावना की निवृत्ति क
रणी ॥ सत्य दोय प्रकार का है एक सत्य बोलणा

सो जो कछु बोलणा वेद अनुसार अरु इस
र सत्य सो ब्रह्म है॥ सत्यं ज्ञानमनंतं ब्रह्म॥ अ
क्रोध कहीये नैयायिकादिकों के वाद कर को
कर आपा दृष्टि गुरु के विद्यमान संते तिनप
र क्रोध न करणा अथवा मन के पुनः पुनः
विकार प्राप्ति संते तिनसु मन का अत्यंत
अभाव न करणा॥ त्याग कहीये अहंकार
का अभाव मैं न होजाणा है॥ शांत कहीये अ
संप्रज्ञात समाधि की प्राप्ति॥ अपैशुन कही
ये चुगली तें रहित होवणा॥ दया करणी स
कल भूतों विषे मैत्री करुणा मुदिता उपेक्ष
ता को अंगीकार कर के सुखी दुःखी पुन्यीपा
पी चतुर विध जो जीव हैं तिन्हों साथ विचर
णा अरु और खग पशु आदिक जो जंतु हैं तिन्हों सा
थ हु यथा योग्य दयाल रहणा॥ अथवा ईश्व
र है एही दया है॥ अलोलत्व कहीये ग्रामभाव
१८ मार्दव कहीये कोमल स्वभाव जहां ग्राम्य अहं
भाव है कहा है तें जो आत्मा मन वाणी तें अगोचर
है॥ ह्री कहीये मैं हु इस कहणे ने हु लज्जा करणी॥

स्वरूप २०
नाककटेकीन्यांई॥ अचापलकहीयेआ
सनकीधडउता सोआसनकीधडउताएहलो
लेजोस्वरूपतेंउथ्थानकदाचितनहोवे॥ ते
जकहीयेनिजकेज्ञानकाप्रकाशसदैवहो
वे॥ क्षमाकहीयेशिष्योंकेवाचपरचेस्य
तेंआरईजोअपराधहैसोनरखेवारणो॥
धृतिकहीयेधीर्यसोप्रारब्धवशसुखदु:
खकीप्राप्तितेंचलायमाननहोवणा
अथवासकलकोमैंधाररहाहूंएहीधी
यहै॥ शौचकहीयेशुचतासोदोप्रका
रकाबाह्यांतरभेदकरबाह्यमृतकाज
लादिसाथअंतररागद्वेषकोकाअभाव
अद्रोहरस्वस्वादतेरहितहोणा॥ नाति
मानताकहीयेमानतेंरहितहोणाभावप्रति
येलोभकरमनिकाआगमनकरेआदि
कोंसंभारवितभावकात्यागकरे॥ अथवामें

[illegible]

सर्वहूं इसमननम का हूं त्याग॥ सो जिसपुरु
षपूर्वजन्मविषेशुभकर्मकरयेहैंअ
रतिनकर्मोकेप्रभावतें शुचश्रीमान
के गेहविषेजन्मपायाहै अरु नहीं आत्म
ज्ञानकीप्राप्तिभईहै सो तिसपुरुषकेए
छवीस अरु पद जो मुख्यगुण है तिनकी
प्राप्तिहोतेहैं सो इनमुख्यकहणेकरअ
रभी बहुतहै जो तिसकोप्राप्तिहोतेहैं॥
इति ३ अबजो इनतें विपरीतहैं तिन
केलक्षणकहतेहैं॥ श्लो०॥ दंभोदर्पो
ऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च॥ अ
ज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ संपदमासुरी
॥ अर्थ ये हे पार्थ आसुरीसंपद अभिजा
तके एहगुणहोतेहैं॥ दंभ जो है दर्पजो है
अभिमानजोहै क्रोधजोहै कठोरताजो
है अज्ञानजोहै॥ दंभ कहीये हूदेभावतें

रहितजोलोकेतिकरजपध्यानादिकर
तो॥ दर्पकहीयेवचनकूंउबोलऐअर
अल्पअपराधकरभुजवेगकरराअर
भर्त्सनकरराा॥ अरअभिमानकही
येविद्याधनादिकरमेरेसमानऔरको
ईनहीं॥ क्रोधकहीयेकामनाकेभंगसेत्ते
बुद्धिविवेजोक्षोभहोवे॥ पारुषकहीये
कठोरस्वभावअरअसनतैनिद्राआ
लस्यादि॥ सोइत्यादिलक्षणतिसपुरु
षकेहोतेहैंजोपूर्वजन्मविषेअशुभकर
मीहैअरईहांहूराजसतामसीमानुषोंवि
षेजन्मपायाहैतातेंतैसेलक्षणवानहे
४॥ अबइनदैवीआसुरीसंपत्ताकाफ
लकहतेहैं॥ श्लो०॥ दैवीसंपद्विमोक्षाय
निबंधायासुरीमता॥ माशुचःसंप
दंदैवीमभिजातोसिपांडव॥ ५ अर्थः

होतेहैं५

दैवीसंपतरक्षिमोक्षकत्ताईहैअरआसुरीसं
पतस्निबंधकत्ताईमानीहै॥सोहेपांडवतूंम
तशोककरदैवीसंपदाविषेतूंअभिजा
तहै॥भावयेजिसविषेदैवीसंपदकीप्रा
प्तिहैसोपुरुषमुक्तिकोप्राप्तिअरजिस
विषैआसुरीसंपदकीप्राप्तिहैसोबंधहै
सोहेअर्जुनितूंमतशोककोकरकाहेतेंजो
दैवीसंपतकोप्राप्तिहैं॥५॥श्लो०
द्वौभूतसर्गौलोकेस्मिन्दैवासुरएव
च दैवोविस्तरशःप्रोक्तआसुरंपार्थ
मेशृणु॥६॥अर्थयह इनलोकविषे
द्वैप्रकारकेभूतउत्पत्तिहैं।एकदैवीदू
सरेआसुरी॥सोदैवीविस्तारकरकहे
हेंअरआसुरी मेरेवचनकरो॥भा
वयेदैवीसंपजोहैसोप्रथमतीनश्लोकों
विषेविस्तारकरकहाहैअरचतुर्थ
मेंजानेहेपार्थ

क्षा करखबे आसुरी संपदा ताको संक्षेपक
र कहे हैं ॥ ६ ॥ अब आसुरी जो पुरुष हैं
ते ओंका आचार सप्तम श्लोक तें लेकर
अष्टादश श्लोकपर्यंत विस्तार कर कहते हैं
श्लो० ॥ प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च जना न विदुरा
सुराः ॥ न शौचं नापि चाचारो न सत्यं ते
षु विद्यते ॥ ७ ॥ अर्थः आसुरी जो जन हैं
प्रवृत्ति को च पुनः निवृत्ति को नहीं जानते
न शौच को न आचार को न सत्य तिन्हों
विखे विद्यमान है ॥ प्रवृत्ति कहीये शास्त्रा
नुसार कर्म करणो ॥ अरु निवृत्ति कहीये
निषिद्ध त्याग शौच कहीये शुचता ॥ आचा
र कहीये श्रेष्ठाचार अरु न सत्य भावना
तौं विखे हो ॥ किंच ॥ श्लोक ॥ असत्यम
प्रतिष्ठं ते जगदाहुरनीश्वरं ॥ अपर

स्परसंभूतं किमन्यत्कामहैतुकं॥८॥
अर्थः असत्य है अप्रतिष्ट है ते जगत को
अनीश्वर कहते हैं॥ अपरस्परसंभूत है
क्या है और काम कारण है॥ भावये॥ अ
सत्य है कहाये वेद असत हैं अप्रतिष्ट है
कहाये तिन वेदों कर कहा जो मार्ग है सो
अनिश्चित है। ते आसुरी ऐसे कहते हैं
अरु जगत का कर्ता ईश्वर नहीं॥ इस्त्री
पुरुष के संबंध कर भूत उत्पत्ति हैं॥ औ
र कहा ये कर्मादिक कारण नहीं काम ही
कारण है॥८॥ रकिंच: श्लो०॥ एतां दृष्टि
मवष्टभ्य नष्टात्मनोल्पबुधयः॥ प्रभ
वंत्युग्रकर्माणः क्षयाय जगतोहिताः
९॥ इन दृष्टि को आश्रय करके नष्टात्मा
हैं अरु अल्पबुधी हैं सो उत्पत्ति को तै हैं
भयानक कर्म जिना क्रूरतांई॥ भावये
क्षये

अरु जगत के क्षय हितै

होते हैं। अरु आपके ना

इनपूर्व कहे को हदोर खि वे धार कर नष्ट हैं आ
त्मे जिन्हों का क्या अनात्म भाव को त्यागि है
अरु अल्प बुद्धी कही ये तु उग्र कर्मों को स
मान रहे हैं अरु जगत् के अर्हता है क्या
मैत्री आदि जो लक्ष्य है तिन्होतें विपरीत ल
क्षणवान् है सो भयानक कर्मों ये उत्पत्ते
भये कहे का हदेवनीच योनी के दाता है सो
उत्पत्त करते हैं ॥९॥ किंच॥ काममाश्रित्य
दुःपूर्वं दंभ मान मदान्विताः मोहाद्गृही
त्वा सद्ग्राहान् प्रवर्तन्ते शुचिव्रताः॥१०॥
दुःपूर काम को आश्रय कर के अरु दंभ
मान मद युक्त हुये मोहते बुरे हठों को ग्रह
ण कर के अशुचिव्रत हुये वर्तते हैं ॥ भा
व ये कह दास्वित नहीं पूर्ण होता ऐसा जो का
म है दुःपूर्ण काम का विशेषण आकांक्षा
का यत्न है अर्थ यह जैसे आकांक्षा पूर्ण
नहीं होता तैसे काम भी पूर्ण नहीं होता॥

ऐसे काम को आश्रय करके दंभ मान
मदयुक्त होये मोहतें बुरे हठों को ग्रहण
करके बुरे हठ कहीये धर्मनाश होइ वा
शरीरनाश होय ऐसा कहा तिसी ये होइ॥
और अशुचवृत होये अशुचही कार्यों
विषे सदैव रसपान ऐसे वर्त्ते हैं॥१०॥
किंच॥श्लो०॥चिंतामपरिमेयांच प्र
लयांतामुपाश्रिताः कामोपभोगप
रमाएतावदिति निश्चिताः॥११॥अ
र्थः अपरिमे चिंता प्रलयांतको आ
श्रय होये काम भोग श्रेष्ट हैं ऐसे क
हते हैं निश्चैवान होये॥भाव ये प्रलयांता क
हीये सदैव जन्मजन्म विषे सबो प्रपर्यंत अपरि
मेयचिंता कहीये काम कामने काम रत्तिसको
आश्रित हुये भोग ही श्रेष्ट हैं ऐसे कहते हैं
और सदैव अशुचवर्त्ते हैं अरु यह चाह

रचिनुआचरणके संग रहते हैं इति ॥११ श्लो०
आसापाशशतैर्बद्धाः कामक्रोधपरायणाः
ईहंते कामभोगार्थमन्यायेनार्थसंचयान्
१२॥ अर्थ यह सूतों आसाके पाशोंसा बंध
थे होये कामक्रोधपरायण होये चहते हैं
कामभोगन निमित्त अन्यायकर द्रव्योंके सं
चयको चहते हैं ॥ भाव येने त्यन ये भोगोंकी
चाह बहुत्यों का हजारों सा पाश बंधे होये काम
क्रोधी होये भोगोंन निमित्त धर्माधर्मको न
विचारते हुये द्रव्यका उत्पन्न करते हैं॥
१२॥ किंच॥ श्लो०॥ इदमद्य मया लब्ध
मिमं प्राप्स्ये मनोरथं इदमस्तीदमपि
मे भविष्यति पुनर्धनं ॥१३ एह अद्य मैं
ने लब्ध है मनोरथ अरु एह पावोंगा॥ ए
ह है एह हु मेरे होवेगा धन॥ भाव येएहप

द्यर्थ है और भी होवे अर धनादिक भी जो
सो चाहत सो तद्या समाप्त कदाचित नहीं पदा
र्थ के प्राप्ति संतै हायतैं और और पावनो
की इच्छा होती है॥१३॥ किंच॥ असो मया
हतः शत्रुर्हनिष्ये चापरानपि॥ ईश्वरो
हमहं भोगी सिद्धोहं बलवान्सुखी॥१४
अर्थ ये एह शत्रु मैं मार्यो है मारोंगा औ
रो को भी मै ईश्वर हूं मै भोगी हूं मै सिद्ध
हूं बलवान हूं सुखी हूं॥ भाव ये सदेव गुरु
त्व धारि भावना है अर सर्व तैं श्रेष्ठ आप
को मानता है। अर इहां र विषे आपको सु
खी मानता है सो एह सभ अज्ञान का ब
ल है जो मूढ होये सदैव एव पदार्थ विषे वर्तते
हैं इति॥ किंच॥ श्लोक॥ आढ्योऽभिजन
वानस्मि कोन्योस्ति सदृशो मया यक्ष्ये

दास्याम्मि मोदिष्य इत्यज्ञानविमोहिताः॥
१५॥ आ ढ्यकहीयेधनवान्हं अरमिमानवान्हं
कहीयेजोमेरे बहुजन संबंधी हैं॥ अन्यकोनहे
मेरे सदृशः॥ यज्ञकरोंगा॥ दानकरोंगा॥ प्रस
न्नहोवोंगा॥ ऐसे अज्ञानकर मोहित हैं॥ आ
वये नाममात्र जो यज्ञ हैं तिसविषे अ
श्रद्धा है अरु दंभ सहित है सो करते हैं॥
अरु दान हं प्रत्युपकार विषे देते हैं॥ अरु इ
सीकर सदैव आपको सुखीमानते हैं सो
ऐसे सदा अज्ञानकर मोहित हैं इति॥१५
किंच: श्लो॰ अनेकचित्तविभ्रांता मोह
जालसमावृताः प्रसक्ताः कामभोगेषु
पतंति नरके शुचौ॥१६॥ अर्थ यह अनेक
चिंताकर भ्रम्य होये अरु मोहरूपीजाल
कर वेड़े होये अरु कामभोगों विषे प्रस
क्त होये रमितहैं अशुचनर्क विषे इति॥

अरु वचन कै कहते ते कातु योजन एह है जो मया
म कन कै भोग कर पुनः हुन कै योनी जो महा
अधम नीच योनी है तिनको पावते हैं इस ते औ
र सव काल स्पष्ट है॥१६॥ किंच: श्लोक आत्म
संभाविताः स्तब्धा धनमानमदान्विताः य
जंते नाम यज्ञैस्ते दंभेनाविधिपूर्वकं॥१७
अर्थ यह आपको श्रेष्ठ मानते हैं अरु रग
वी है अरु धन के मान अरु मद कर युक्त
हैं॥ सो ऐसे पुरुष यजते हैं नाम मात्र य
ज्ञों को तें दंभ कर अरु विधिपूर्वक॥ भावये
अर्थ ईस्वर है अरु पापते जिसकी उत्पत्ति
है अरु पापरूप है ऐसा जो धन है तिसके
मानी अर्थ यह तिसको आपका मानते होये
अरु तिसके मद कर मत होये अरु आपको
संभावित कया पुन्य कृत मानते होये अरु द
ने अभिमान कर स्तब्ध होये सो नाममा

जोरतिसाकरता [illegible] बेन्हाहं कर्ता २

त्रयज्ञोंकोकरतेहैंनाममात्रकहावेजिहैंके
करताहंभोगताहै अर्थयहजिसकालविषे
यज्ञकरतेहैंसोरतिक्लौवाँ [illegible] अभिमान
हैंतातेंनिःफलहैकस्यारतिक्लौका॥अरुजि
सातेंदंभकरकरतेहैंतातेंहूंनिःफलहै॥
अरुसोयज्ञहूंअविधपूर्वकहै अर्थयहवेद
विधतेंविहीनहै॥तातेंहूंनिःफलहैइत्यर्थः॥
१७॥किंचः श्लो० अहंकारंबलंदर्पंकामंक्रो
धंचसंश्रिताः॥मामात्मपरदेहेषुप्रद्विषं
तोभ्यसूयकाः॥१८ अर्थयहअहंकारब
लदर्पअरुकामक्रोधकोआश्रितहोये
अरुनिंदकहोयेमुजआत्माकापरदे
होंविषेद्वेषकरतेहैं॥भावयेसकलशरी
रोंविषेव्यापीजोपरमेश्वरहैतिससा
थतेंअहंकारीद्वेषकरतेहैंतातेंआत्मह
त्याराहैं॥कदाचितनतिनकेशुभनहोवेगा॥

रसौविदत्तीतिन्हीका भोगताहै

१८॥ अब एह कहते हैं जिसतें असे पुरुष परमेश्वरके द्वेषी हैं तातें परमेश्वर हूं तिन्हों को योनीयोंविषे डारता है॥ श्लो०॥ तानहं द्विषतः क्रूरान् संसारेषु नराधमान्॥ क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेव योनिषु १९ अर्थ एह तिन्हों द्वेष करत्यों क्रूरों नराधमों अशुभों को मै निरंतर संसारविषे आसुरीयोनीयों विषे डारताहूं॥ भावये॥ जिसतें परमेश्वर द्वेषी हैं अरु निर्दयी हैं अरु मानुषोंविषे नीच हैं नीच कहीये केवल तमोगुणी हैं अरु अशुभ कहीये नीच है आचार जिन्हों का असे पुरुषों को परमेश्वर सर्वत्र आसुरी योनी जो हैं तिन्हों विषे निरंतर कहीये सदैव पुनः पुनः डारता है तातें सदैव बंध रहते हैं मोक्ष कदाचित नहीं पावतें इत्यर्थः॥ १९ किंच॥ श्लो०

आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि
मामप्राप्यैव कौंतेय ततो यांत्यधमां गतिं
२०॥ अर्थ यह मूढ जो हैं जन्म जन्म विषे आसु
री योनि को पायके हे कौंतेय मो को न पायके जा
ते हैं तिसते अधम गति को॥ भाव ये पूर्व नि
रूपित जो आसुरी संपत लक्षण हैं सो प्राप्त
हैं जिन्हों विषे सो ते मूढ हैं सो आसुरी यो
नी को पाय पाय अरु मुज परमेश्वर को न पाय
के जाते हैं तिर्यगादि योनी को जहां कष्टों क
ष्ट का अनुभव करते हैं इत्यर्थः २१ अब ए
ह कहते हैं जो एही काम क्रोध अरु लोभ जो
मुख्य लक्षण आसुरी संपदा के हैं सो ई नर्क का
द्वार है अर्थ यह जो इन्हों पुरुषों का एही स्वभाव है
सो नर्क विषे जाते हैं॥ श्लो० त्रिविधं नरक
स्येदं द्वारं नाशनमात्मनः कामः क्रोधस्त

याज्ञोभस्तस्मादेतत्त्रयंत्यजेत्॥२१॥अर्थः
काम क्रोध तथा लोभ एह त्रिविध नरक द्वार हैं
कैसा है पुनः जो आपका नाश न है तिसा तें
इन तीनो का त्यागो॥ भावार्थ भाव ये कामादि ती
न नरक द्वार है नरक द्वार कहा ये इनि प्रापक
र नरक को प्रापक है के इन्होंने आत्म भाव तें रमे हु
वता हारे है एह कामादिक अर्थ यह जो जन्मासी
के होइ तो वह भी अपरो स्वस्वरूप अभ्यास तें
भूल जायते सा तें सभ को एह बताता है जो
जैसे कैसे कामादिको का त्याग करे इत्यर्थः॥
२१ अब कामादि त्याग का फल कहते हैं॥ श्लो
एतैर्विमुक्तः कौंतेय तमो द्वारैस्त्रिभिर्नरः
आचरत्यात्मनः श्रेयस्ततो याति परां
गतिं॥२२॥ अर्थ ये हे कौंतेय इन त्रिवि
ध तम रूप द्वार ते नर विमुक्त होया आ
चरता है आपको श्रेय तिसा तें जाता है पर

गत्ति को॥ भाव यै पूर्व इन्यों के प्रभाव तें इहां श्री
त्र यह श्रूस्त्रनें इष्ट गुरौं कौं पाय के जो नर कामारद्द
तें खे श्रूष कर मुक्ति है खे श्रूष कर कहा थे र
स कौं ह्रूं रखै सु त्याग कीया है सो आप के श्रेय
जो दैवी संपत्त है सो आचरण करता है॥ तिस
ते परम गत्ति जो मोक्ष है सो पावता है इत्यर्थः॥
२२ अब एह कहते हैं जो इन तें खिपरीत है सो मो
क्ष कों नहीं पावता॥ यः शास्त्रविधिमुत्सृ
ज्य वर्त्तति कामकारतः न स सिद्धिमवाप्नो
ति न सुखं न परां गत्तिं॥ २३॥ अर्थ यह
जो पुरुष शास्त्रविधि को त्याग कर वर्त्तता
है काम अनुसार क्या काम का प्रेरया होया
सो न सिद्धि को प्राप्त होता है न सुख को न प
रम गत्ति को॥ भाव यह जो पुरुष इन शास्त्रो
क्त प्रकार को त्याग के काम ने यो रजित वर्त्तता
है सो पुरुष सिद्धि कही ये अंतःकरण की

सं

सुषना सो रति सकोन हो पावता अर सुखक
हाये तू शाम स्वभाव अर परम गति कहाये
मोक्ष सो रति काको भी नहीं पावता। २३। अब
श्री भगवान जी अर्जुन प्रति संबोधन करके
कहते हैं जो तो को शास्त्रोक्त विध मान लेया
गया है। श्लो०॥ तस्मा च्छास्त्रं प्रमाणं ते का
र्याकार्य व्यवस्थितौ ज्ञात्वा शास्त्रविधानो
क्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि॥ २४॥ अर्थ ये
कार्य अकार्य की व्यवस्था विषे तुम के
शास्त्र ताते शास्त्रविधको जाणके क
र्म करणे को हे अर्जुन तु म योग्य है॥ भा
व ये एह कार्य है एह अकार्य है इस व्यवस्था विषे
न जो शास्त्रोक्त प्रमाण हैं सो तेरे मान्य हैं
काहते जो तूं दैवी संपत को प्राप्त हैं ताते शा
स्त्रों विधको जाणके अपणो क्षत्री जन्म
के अनुसार जो युद्धादिक कर्म हैं सो करणा २४
इति श्री भगवद्गीता श्लो०३ बोधायः

अर्थ ये जे पुरुष शास्त्रविधि को त्याग कर यजते हैं श्रधा अन्वित
होय तिन की निष्ठा कौन है हे कृष्ण सात्विकी कहते हैं वा राजसी कि
हते हैं॥ वा तामसी ॥ १

श्रीगणेशाय नमः॥ अथ सप्तदशो अध्या
य विषे एह वर्नन होवेगा॥ पूर्व अध्याय के अंत वि
षे॥ यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः
इस पुरुष की विधि नो कही परंतु एह कहो
जो शास्त्रविधि को त्याग कर यजते हैं श्रधा
युक्त हूवे तिन की कौन गति है॥ अर्जुनोवा
च॥ श्लो०॥ ये शास्त्रविधिमुत्सृज्य यजंते श्र
धयान्विताः॥ तेषां निष्ठा तु का कृष्ण सत्व
माहो रजस्तमः॥ १ श्रीभगवान जी इन अर्जु
न के प्रश्न को श्रवण कर के तीन श्लोकों क
र श्रधा को त्रिविध वर्नन करते हैं॥ श्रीभग
वानोवाच॥ श्लो०॥ त्रिविधा भवति श्रधा दे
हिनां सा स्वभावजा॥ सात्विकी राजसी चै
व तामसी चेति तां शृणु॥ २॥ अर्थ यह॥ वे
देहवानों के श्रधा त्रिविध होती है सो स्वभाव
सो अर्जुन का एह प्रयोजन है जो पूर्व अध्याय विषे केवल
सात्विकी श्रधा जो दैवी संपत द्वारा ने भवर्नन करी है सो तिन

श्रधावान् तो मोक्षफल होता है॥ परन्तु एह प्राकृती जीवों को जो शास्त्रविध
वहीन श्रधा होती है सो श्रधा कौन नाम है अर तिनका फल कौन है॥ १

पूर्वजन्मके संस्कार २ सात्विकी ५

तेउत्पन्नहोतीहै॥ सात्विकीराजसीतामसीचपुनः
इतितिन्नोंको श्रवणाकरो॥ भावयेकि अपने
स्वभावके अनुसार अथवा वर्णके अनुसा
र श्रधा होती है ब्राम्हणवर्णके सात्विकी
श्रधा होती है अरु छत्रीके राजसी श्रधा हो
ती है अरु वैस्यके राजस तामसी अरु सू
द्रवर्णके तामसी श्रधा होती है अथवा जि
सका जो स्वभाव है सो तैसे तिसके श्रधा
होती है॥ अर्थ यह वर्ण तो ब्राह्मणका है अ
रु स्वभाव तिसका विवेकरहित है सो तिसकी
वे श्रधा छत्रीकी होती है सो ऐसे सबोंको
देखि चाहलेणा॥२॥ अब श्लोक कहते हैं॥ श्लो
०॥ सत्वानुरूपा सर्वस्य श्रधा भवति भार
त॥ श्रधामयो यं पुरुषो यो यच्छ्रधः स एव
सः ३॥ अर्थ यह सबकी सत्वानुरूपा श्रधा
होती है हे भारत॥ यह जो पुरुष है सो श्रधा

सात्विकी श्रधा है

मयहैजोजैसीश्रधाहैतैसेहैवहपुरुष॥
भावयेअर्जुनकोजोभारतसंबोधनकरकें
श्रीभगवानजीकहाहेसोएहप्रयोजनहेजो
तूंमलासंस्कारीहैंअरस्वेच्छस्कवीहैंतातेंतूं
केवलसात्विकीशुभश्रधावानहैंसोइसीहे
ततेदैवीसंपतकोप्राप्तहैं॥अरयहश्रधा
यद्दिपवासनावसतगुणीहैअररसर्वैकेहोती
भीसतगुणतेहै॥परंतुजेसाकिसीकापूर्वला
संस्कारहैतिससंबंधीसर्वकेसोश्रधाउत्पत्ति
होतीहैअरतैसारूपहीपुरुषकाहोताहै॥इति
३॥अबतिसकेभेदोंकोदिखावतेहैं॥श्लो०॥
यजंतेसात्त्विकादेवान्यक्षरक्षांसिराज
साः॥प्रेतान्भूतगणांश्चान्येयजंतेतामस
साजनाः॥४॥अर्थयेसात्त्विकीजोपुरुष
हैंसोदेवतियोंकोयजतेहैंअररराजसीजोपुरु
षहैंसोयक्षराक्षसोंकोंअरऔरजोतामसी
पुरुषहैंसोप्रेतअरभूतगणोंकोयजतेहैं॥
भावयेजेपुरुषसात्त्विकीसंस्कारोंकरउत्पत्ति

हैं सो इंद्रादि देवतयों को पूजते हैं अरु राजस
संस्कारों कर उत्पत्ति हैं सो यक्ष राक्षसों को पू
जते हैं अरु जो तामस संस्कारों सहत उत्पत्ति हैं
सो प्रेतादिकों को पूजते हैं अरु यह जो प्राकृत
पुरुष हैं जो पुरुषार्थ अपणे को वधावते नही
सो पूर्वलयों संस्कारों कर फेर फेर जन्म मृत्यु भा
गी होते हैं इत्यर्थः ॥४॥ अब एह कहते हैं जो
श्रद्धा ते रहित हैं अरु केवल दंभी हैं ऐसे पुरु
ष जो तप को तपते हैं सो आप को अरु मुझ
परमेश्वर को भी दुख देते हैं ॥ श्लो० ॥ अशास्त्र
विहितं घोरं तप्यंते ये तपो जनाः दंभाहंकारसं
युक्ताः कामरागबलान्विताः ॥ अर्थ यह शा
स्त्र विधि ते रहित अरु भयानक ऐसा जो त
प है जो तप जन तपते हैं ॥ दंभ अहंकार संयु
क्त अरु काम बलान्वित ॥ भाव ये कर्म उपा
सना ज्ञान त्रिविध प्रवृत्ति पादक जो शास्त्र है
तिन शास्त्रों ते रहित जो शास्त्र केवल काम
ना पर हैं तिन कर प्रेरे जो दंभ अरु अहंका

पूर्वश्लोकोविषे कहेजोप्राकृत जीवहै

रयुक्त हूयेजो घोडतपों कोतपते हैं॥५ सोक्या करते हैं अबएहकहते हैं॥ श्लो०॥ कर्षयंतः श रीरस्थं भूतग्राममचेतसः मांचैवांतः शरीर स्थं तान्विध्यासुरनिश्चयान्॥६ अर्थयह आकर्षणताकरते हैं शरीरविषेजोभूतसमूह है तिसकोअरमुज शरीरांतःस्थितकोतिन अचेत्योंकोआसुरनिश्चयजान॥भावयैंति नप्राकृतपुरुषोंतेंनीचहैं अरअचेताकही यैंतामसी हैं सोपूर्वश्लोकरविषेकहाजोघोडत पहैतिनकोतपकरशरीरकोभीकष्टदेते हैं अरमैंजोशरीरस्थहूं सोमुजकोभीकष्ट देते हैं तिनकोआसुरीनिश्चयजाणा॥तुम तोअसंगहोतुमकोकैसेकष्टदेते हैइतिचे त्याह॥ईश्वरजोजीवरूपकरशरीरोंविषे प्रवेशीहैसोतिसजीवकाशरीरादिकोसा थअध्यासहैसोशरीरकेकष्टदेणेकरअ ध्यासकेवशतेंजीवभीकष्टपावताहैअथ वासर्वशरीरस्थजोपरमेश्वरहैसोतिसको

कष्टतपस्वी जो औरों के कष्ट न समेत है तपस्वि
ओं का सो जिन तपतप को करद्धव देत है ईश्व
र को इत्ति पूर्वो स्त्रिय:॥६॥ अब अहार वर्नन
करते हैं श्लो०॥ आहारस्त्वपि सर्वस्य त्रिवि
विधो भवति प्रिय:॥ यज्ञस्तपस्तथा दानं ते
षां भेदमिमं शृणु॥ औ आहार जो है पुन:
सबों के त्रिविध प्रिय होता है॥ यज्ञ तप दान
जो तैसे है तिन्हों का भेद एह सुनो॥ भावये
अहार यज्ञ तप दान एह चार सात्विकादि
गुणों के भेद तें जो सात्विकादि पुरुष हैं तिन
के प्रिय है तिन्हों का भेद व क्षमाण श्लोकों में
बे मुजत्ते सुनो॥७॥ अब अहार निर्णय॥ श्लो
०॥ आयुसत्व बलारोग्य सुख प्रीति विवर्धना:
रस्या: स्निग्धा: स्थिरा हृद्या आहारा: सा
त्विकप्रिया:॥ अर्थ यह आयु सत्व और बल
और आरोग्य और सुख पुन: प्रीति का वधावि
ता हारा है॥ और जो रस्य स्निग्ध स्थिर
हृद्यांग म अहार है सो सात्विकों के प्रिय
है॥ सो दिखावते हैं॥ रस जिन्हों विषे रस्य

तहोवैश्रैसेजोपालादइहैं श्ररश्रोम्चजोभोजनहै
कैसेवैजोरूचिररस्यतेहैं श्रर्थयिहभक्ष्याकी
येहोयेरुचिरपर्यंतश्रपणीसत्ताकोधारैंश्रर
दृढ्हैकेंवेयिहोवें श्रैसोजोश्राहारहैसोचतु
र्थभागकोत्यागकेंतूरतीनभागभस्येहो
येश्रर्थयिहदोभागउदरकेंश्राहारकरभरे
श्ररएकभागजलकरश्ररएकभागश्रोषध
प्राणसंचारनमित्तहोसोइसप्रकारभो
जनकीयाश्रायुकेवधावणाहाराहैश्ररस
केवधावणाहाराकहीयेश्रंतस्करणकोशुध.
बॅलकरताहैश्ररकेवधावणाहाराकहीयेइंद्रीयों
कौबलदेवणाहाराहैश्ररश्ररोग्यकाकर्ताहै
श्ररसुखजोउपशमधर्महैंतिसकेवधावणा
हाराहैश्ररपरमेस्वरप्रीतकावृधकरनाहै
एहश्रासौकाप्रमाणहैसोएहश्राहारसात्वि
कीपुरुषोंकेप्रेयहैभावयहसहकामीनि:
कामीदोप्रकारकेजोसात्विकीपुरुषहै
तिनदोनोकाफलदाताहैइत्यर्थः॥श्रब

राजसी वर्ननि करते हैं॥ श्लो॥ कट्वम्ललवणा
त्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः आहारारा
सस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः॥९॥ अर्थ
यह कटु आमल सलोंणा अत्युष्ण तीक्ष्ण रू
क्ष जलावणाहारादिक जो भोजन है सो राजसी
पुरुषों के इष्ट है। सो कैसे है दुःख शोक आ
मय कहीये रोग के दाता है। सो दिखावते हैं
सो अति शूद्र सबों विषे आवता है अर्थ यह
विषय भोगार्थ जो अँन्याय कर इनका से
वता है सो राजसी कहा है अर जो काहु प्र
संग कर कदाचित इनका सेवता होवे तो
दोष नहीं॥ कटु कहीये नीमादिक आमल क
हीये आमलादिक लवणा अर उष्ण प्रसि
ध है॥ तीक्ष्ण मरचादिक रूक्ष कहीये सो
वकादिक अर विदाहन कहीये तैलादिक॥ सो
एह जो भोजन है राजसी पुरुषों के वांछि
त है सो कैसा है ये आहार जो इंद्री अर
मन अर शरीर के दुःख अर शोक अर

रोगका दाता है ॥ ९ ॥ अब तामस आहार दिखावते हैं आहार
श्लो० ॥ यातयामं गतरसं पूतिपर्युषितं च यत्
उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियं ॥ १०
अर्थ यह जिस भोजन को एक प्रहर व्य
तीत होया हो अर रसका जिसते अभाव होग
या है अर दुर्गंधित है अर जो [illegible] पुनः
उच्छिष्ट हो अमेध्य हो ऐसो जो भोजन है सो
तामसीयों को प्रियहै ॥ सो दिखावे हैं ॥ यात
याम नाम रस प्रसिद्ध है अर दुर्गंधित कहीये
जो बास्या हो वो और सर्व प्रसिध हैं ॥ सो
एह भोजन तामसीयों को प्रियहै अर निद्रादि
कोके दाता हैं इति १० ॥ अब त्रिविध यज्ञ वर्न
न करते हैं ॥ श्लो० ॥ अफलाकांक्षिभिर्यज्ञो
विधिदृष्टो य इज्यते ॥ यष्टव्यमेवेति मनः समा
धाय स सात्त्विकः ॥ ११ अर्थः अफलाकांक्षी
योंने विधदृष्ट यज्ञ जो करीयत है ॥ सो अव
श्य करणा है मन एकाग्रता ई ऐसो यज्ञ
सात्त्विकी है ॥ भावये फलकांक्षाते रहित

जो पुरुष है सो मन एकाग्र नर सिंत वेद वृत्ति पा
इत जो यज्ञ है सो करणा है अब तू सुन श्रेष्ट सच्चि
श्रद्ध कर करते हैं सो यज्ञ सात्त्विकी है काहे
ते जो कामना ते रहित है अर्थ यह भगवद्
य है॥११॥ अब राजस यज्ञ वर्नते॥ श्लो० अ
भिसंधाय तु फलं दंभार्थमपि चैव यत्॥ इज्य
ते भरत श्रेष्ट तं यज्ञं विद्धि राजसं॥१२ अर्थ
ये फल को अभिसंध के जो यज्ञ दंभार्थ कि
यता है हे भरत कुल विषे श्रेष्ट तिस यज्ञ
को राजसी जाण॥ भाव ये पुत्रादि धनादि
की कामना करि के जो दंभ साथ यज्ञ है सो
राजसी है अरु इहां भरत कुल विषे श्रेष्ट
अर्जुन को संबोधन कर कहता इस हेत
है जो भरत कुल विषे भी दंभी कोई नहीं
होया तो तूं तो तिस कुल विषे श्रेष्ट उत्पत्ति
होया है तातें तुझ के दंभ साथ कार्य करना

कहताहूं अरुदंभयहै और स्पष्टहै॥१२॥ अ
ब तामस बर्नते॥ श्लो॰ विधिहीनमसृष्टान्नं
मंत्रहीनमदक्षिणां श्रद्धाविरहितंयज्ञं
तामसंपरिचक्षते॥१३॥ अर्थ ये विधिही
न है अरु अन्न जिसविषे असृष्ट है मंत्र अ
रु दक्षिणातें रहित है अरु श्रद्धातें हूं रहि
त है औ सो जो यज्ञ है सो तामसी कहियत है
॥भावये वेदविधतें रहित है अरु अन्न जि
सविषे असृष्ट है असृष्ट कहीये जो ब्रह्मा
कर रचा नहीं मानुष्यादि और दक्षिणा हू य
थायोग्य नहीं और वेदोक्त मंत्रांतें हूं रहि
त है अरु श्रद्धा हू जिसविषे नहीं अर्थ
अपवाँहिं सारहि भाव है औ सो जो यज्ञ
है सो करया होया तामसी होता है॥१३॥
अब त्रिविधतपवर्ननि करते हैं॥ श्लोक॥
देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवं॥

ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते १४
अर्थ ये देवता द्विजाति अरु गुरु अरु बुधिमा
न को जो पूजना है अरु शौच जो है आर्जव जो
है ब्रह्मचर्य जो है च पुनः अहिंसा जो है सो ए
ह सर्व [illegible] शारीर संबंधी तप कही
यत है॥ भावये देव कहीये इंद्रादि देवता अ
रु द्विज कहीये ब्राह्मण अथवा ज्ञानी साध
गुरु कहीये अज्ञान निवर्तक अथवा शुभ
मार्ग प्रवर्तक प्राज्ञ कहीये युक्त उपदेष्टा
सो इन सर्वो का पूजन शौच कहीये अंत
र बाह्य पवित्र रहणा आर्जव कहीये सू
धौ रहणा आत्म मार्ग विषे दंभादि रहि
त अरु लौकिक व्यवहार रूं कपट तें रहि
त ब्रह्मचर्य कहीये अष्ट भांत मैथुन तें
रहित अरु वेद शास्त्र का अध्येन अ
रु अहिंसा कहीये मन वाणी काय कर का
हू कौं न दुखावणा सो एह अरु हल करा

अर्थ   अर्थ

इत्यादि और लक्षणकीसिद्धता शारीरकतपहै॥१४॥ श्लो० अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत्। स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते॥१५ अनुद्वेगको करता जो वाक्य है सत्य है और प्रिय है और हितरूप है जो स्वध्यायको है तिसका अभ्यास एह वाणीरूपतप है॥ भावयें जो वाक्य क्रोध कौन उपजावे च पुनः सत्य हो और मनका प्रिय हो कहीये जो मनोरम अथवा मनको आत्मपद खें वे जो ३॥ और हितकरता हो भावयें यद्दिप प्रत्यक्ष कूड वत्त दृष्ट आवे परंतु अंतको सुख करे और पठे जो वेदांत शास्त्र हैं तिन्होंका जो वारंवार अभ्यास है सो इत्यादि वाणीकातपहै॥१५ श्लो० मनः

२ प्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः। भाव संशुद्धिरित्येतत्तपो मानसमुच्यते॥१६॥ अर्थ यें॥ मनकी प्रसन्नता और सौम्यभाव और मौन और आत्मविनिग्रह और शुद्धभाव॥ एह तप मानसी कहीयत है॥ भावयें मनकी

सात्त्विकादिविभाग तपसा त्रिविधं ... अत्र कायिक ... वाचिक ... मानसिक ... तपः ... १२

प्रसन्नता कहीये जो राग द्वेषतें रहित स्वच्छ हो
वना ॥ सौम्यत्व कहीये जो कठोरतातें रहित
कोमल स्वभाव मौन कहीये मनन स्वभाव
अथवा अहंत्वतें रहित होवणा आत्मविनिग्र
ह कहीये मनको विषयोंतें वैराग्य ॥ भाव
शुद्ध कहीये आत्मभावना सो इत्यादिक जो
ऐसो धर्म है सो मनका तप है इति १६ अब
तपको तीन श्लोकों कर सात्त्विकादि भेद कर
त्रिविध वर्णन करते हैं ॥ आदौ सात्त्विक तप
वर्णन करते हैं ॥ श्लो० ॥ श्रद्धया परया तप्तं
तपस्तत्त्रिविधं नरैः अफलाकांक्षिभिर्यु
क्तैः सात्त्विकं परिचक्षते ॥ १७ ॥ अर्थ यह न
रोंने परम श्रद्धा करतप्या जो तप है सो त्रि
विध है ॥ अफलाकांक्षीयोंने जो युक्तकर
तप्या है तप सो सात्त्विकी कहीयता है ॥ भाव
ये परम श्रद्धा कर जो तप्या है तप नरोंने ॥
सो त्रिविध है तिनको विषे सात्त्विकी श्रे
ष्ठ है काहेते जो फलकांक्षातें रहित है

अरु युक्त सहित है युक्त कहीये जो करयो हो
या व्यभिचार कोन हो वा वना सो तप सात्विकी
कहीयत है ॥१७॥ अब राजसी कहीयत है।
श्लो० सत्कारमानपूजार्थं तपो दंभेन चैव
यत् क्रियते तदिह प्रोक्तं राजसं चलम
ध्रुवं॥१८ अर्थ ये आदर अरु मान पूजा के अ
र दंभ युक्त जो तप करीयत है सो इहां राजसी
कहीयत है सो चल है अरु अध्रुव है॥ भावार्थ॥
आदर कहीये सकल लोक संभावित माने॥
अरु मान कहीये तपस्वी माने अरु पूजा करि
इन दंभ सहित करयो जो तप है सो ईहां कहीये
इन सब धर्म विषे राजसी कहा है सो राजसी
ते राजस है ता तें चल है अरु फल इन का अ
स्थिर रहै इत्यर्थः॥१८॥ अब तामस वर्न
न करते हैं। श्लो० मूढग्राहेणात्मनो यत्पी
डया क्रियते तपः परस्योत्सादनार्थं वा त
त्तामसमुदाहृतं १९ अर्थ वह मूढ पुरुषों

नेजोतपहठकरआपकेपीडतांईअथवा
औरोंकेकष्टनिमित्तकरीयतहैसोतपताम
सीकहा[illegible]है॥भावयेमूढकहीयेतामसीजी
वसोबडेहठकोग्रहणकरकेअर्थयहआ
रीरअपरोंकोकष्टदेकरजोतपकरतेहैं
आपकोपीडातांईकहीयेजोपररिताम
रतिनेकादुःखतिनहीकोहोताहैअरऔ
रोंकेकष्टतांईकहीयेजोशत्रुवधादिका
र्यनिमित्तहैसोतपतामसीकहीयतहै॥सो
ईहांतीनेप्रकारतपकारनेराधिश्रीभगवा
नेजीइसनिमित्तकरयाहैजोतामसीराज
सीकात्यागकरशास्त्रोक्तजोसात्त्विकी
तपहैसोकरेइति॥१९॥अबगुणभेद
तेंत्रिविधदानकहतेहैं।श्लो०॥दातव्य
मितियद्दानंदीयतेनुपकारिणे।देशे
कालेचपात्रेचतद्दानंसात्त्विकंस्मृतं॥
२०॥अर्थयहदेशकालपात्रविषजोदे

ता है ऐसे निश्चय कर जो दान दीजैतु है अनु
उपकार रहित है तिस दान को सात्त्विक कि
हा है। भाव ये देश काल जो आधि व्याधि व्या
दिक अर इत्यादि जो और दान है सो दा
ता भोक्ता परमेश्वर को मान कर देता ही है
ऐसे निश्चयवान होया है देश काल पात्र
विषे दान जो दीजायत है सो दान सात्त्वि
क कहा है देश कहीये काशी कुरुक्षेत्रा
दि जो तीर्थ हैं अथवा देश कहीये सत संग
जो बडा तीर्थ है सो देश है अर काल कहीये
ग्रहणादि जो पर्व हैं अथवा काल कहीये
जिस समे मन शुद्ध होवे अर पात्र कहीये त
पस्वी ब्रह्मज्ञानी आदि इति अथवा सोई देश
काल पात्र है जो दुःखी अरु दुखित योग्य पुरु
ष अथवा पशु आदि को दीजै इत्यर्थः ॥
अथवा अधिकारी जन तासी को जो तत्वज्ञान को
दान है सो श्रेष्ठ सात्त्विक है अथवा विद्यार्थी को

२०॥ अब राजसी दान कहते हैं॥ श्लो० यत्तु
प्रत्युपकारार्थं फलमुद्दिश्य वा पुनः दी
यते च परिक्लिष्टं तद्दानं राजसं स्मृतं २१
अर्थ यह जो दान तु पुनः प्रत्युपकार अर्थ
अथवा फल को धार कर दीजीयत है पुनः
परकलेश है सो दान राजसी कहा है।
२१ भाव ये तु पुनः शुद्ध रीति सा सात्विकी ते
भिन्न राजसी दान विषे है॥ जो दान प्रत्यु
पकार निमित्त दीजीयत है अरु फल को हा
कहीये पुत्र आदि स्वर्गादिको प्राप्ति निमि
त दीजीयत है अथवा दान चहते को क्लेश
देकर दीजीयत है सो दान राजसी कहीय
त है २१ अब तामसी दान कहते हैं॥ श्लो०
अदेशकाले यद्दानमपात्रेभ्यश्च दीय
ते॥ असत्कृतमवज्ञातं तत्तामसमुदा
हृतं॥२२॥ अर्थ यह अदेश अरु अकाल
अरु अपात्र विषे जो दान दीजीयत है सो।

रजतमनेररहैतप्रधमनहोया ४

हानतामसीकहाहै॥भावयेसारत्विकीदा
नदेतोअरुजेदेनेआरदिकहेहैंसोतद्धि
रोधीजोदेनाआरहैहैंसोरनिमोंखिबेदीया
जोदानहैतिरादरकरकेअरुअज्ञान
करकेसोदानतमगुणीहैइति॥२२॥
अबएहकहतेहैंपूर्वकहेजोत्रिगुणभेद
तेंत्रिविधयज्ञतपदानादिहैंसोकरतेहूयेय
दिफलकोदेतेहैंपरंतुफलतिन्होंकानाशी
हैअरुएहईश्वरकेवास्तवनामोंकोकहताहू
वायज्ञादिकरताहैतदअनाशीफलको
पावताहैअरुव्यावहारिककार्येंकिहूंसिद्ध
ताहोतीहैसोतहांब्रह्माजीकेप्रमाणकर
केश्रीभगवानजीसिद्धकरतेहैं॥श्लो०॥ॐ
तत्सदितिनिर्देशोब्रह्मणस्त्रिविधःस्मृ
तः॥ब्राह्मणास्तेनवेदाश्चयज्ञाश्चविहिताः
पुरा॥अर्थयेॐतत्सतइतिनामब्रह्मके
कहेहैं ब्रह्माजोहैतिनकरवेदजोहैंयज्ञजो

श्रीमद्भगवद्गीता १२४

ॐ

हैं र चन भया है पूर्व इत्यि॥ भावयेब्रह्मरवेत्रो
च्यहै अर उंनत सत्त ए हजीन रवेऊ्र बताहैं॥
अर्थचिह ब्रह्मनामी है अर ए हजीननाम है
सो अब इन्हों के अर्थ कहत्ते हैं ब्रह्म तो प्र
धरनिर्विभाग अधिष्टान रूप है॥ अरउंना
म वरऊ्र इक्या सब लब्रह्म रजेस को कहत्ते
हैं सो सोई है अर इस उंके बहुत रूप अर
नाम आचार्यों के हे हैं रूप तो सपूर्ण सिधां
तो कर रूषों देवों कहे हैं सो रामगीता विषे
प्रसिद्ध है अर नाम द आतो मुख्य है अर के
रह्है बहुत है सो दुआ दिखावते हैं॥ सार्ध
श्लोक करा॥ श्लो॰ उँकारं प्रणवं चैवंस
र्वव्यापन मेवच अनंतं चतपातरं च्यु
क्तवेद्य तमेवच॥१ तुरीहंसंपरब्रह्मे
इतीनामानिजानाति॥ सो इनके अर्थरा
मगीता विषे प्रसिधहैं॥ अरउपनिषतो
विषे अर औरस्त्रा स्त्रों विषे बहु प्रक

विद्युत

रउंकारके स्वरूप नाम प्रगट है इसकी क्या
ख्डु विस्तार करीये॥ अब तात्पर्य का अ
र्थ करते हैं तत् कहीये परोक्ष स्वरूप सर्व
साक्षी ते सर्वव्यापी अथवा तत् कहीये जो आप
को सदा अपरोक्ष होवे अरु और सर्वोंको
परोक्ष होवे अरु सत कहीये अपरोक्ष त्रिका
लभावस्वरूप अर्थ यह वासतें भावकर अहं
स्मि कर त्रिकाल सत अपरोक्ष है अरु उपा
धिक भावकर इदमस्मि इदमस्मि इन कर
के तत् अपरोक्ष है॥ पदार्थ के अभावकर इ
दं नास्ति इस कर सत के अभावतें व्यभि
चार होता है इति चेत्याह इदं पदार्थमें इदं न प
दार्थमें कल्पित पदार्थके भावाभावकर
द्रष्टा आत्मा के व्यभिचारत्व नहीं इति॥ सो
इन नामोंको कहिकर आरुढ है विषय अरु लजी
वेदोंके अरु यशोंको प्रगट करता भया है॥

२३ जो पुरुष हैं सो १ सो द्विजादि होते है २

अब तत्त्ववेत्ता यज्ञादिक कर्म जो कर्ते हैं
सो ॐ शब्द को उच्चार कर कर्ते हैं॥ श्लो०॥
तस्मादोमित्युदाहृत्य यज्ञदानतपः क्रियाः
प्रवर्त्तन्ते विधानोक्ताः सततं ब्रह्मवादि
नां॥२४॥ अर्थ येतेसीतें ॐ शब्दसे करहेके
र यज्ञदान तपकी जो क्रिया है सो वेदोक्त
प्रवर्त्तते हैं निरंतर ब्रह्मवादी॥ भावयेत
स्मात् कहीये ॐ शब्द का अर्थ जो है कर्तृक
र्म करण संप्रदान अपादान अधिकरण
रूप मैं हूं अरु मैं शुद्ध हूं इस हेतु तें ॐ को उ
चार कर ब्रह्मवेत्ता सदैव वेदोक्त यज्ञ त
पकी क्रिया कर्ते हैं अर्थ यह द्वैत भावना
के बाधतें आपको अद्वैत शुद्ध निर्विकार
अक्षय भावना कर्ते हैं येरे श्रेष्ठाचार को
ग्रहण करते हुये ब्रह्मवादी कहीये सदैव
ब्रह्मका चिंतवन कथनारे हैं जिन्हों के सो
वेद आज्ञा अनुसार यज्ञतप क्रिया को स

होने

दैवकरतेहैं॥२४॥ अबमोक्षकांक्षीयों
कोजोयज्ञादिकेकर्मकरणाहैसोदिखा
वतेहैं॥श्लो० तदित्यनभिसंधायफलंय
ज्ञतपःक्रियाः॥दानक्रियाश्चविविधाः
क्रियंतेमोक्षकांक्षिभिः॥२५॥ अर्थः
मोक्षकांक्षीयोंनेंफलकोनअभिसंधक
रतेतत्ऐसेउचारकरयज्ञतपकीजोक्रि
याहेअरविविधजोदानक्रियाहेसोकरी
यतेहै॥भावयेलोकपलोकफलोंकीका
मनाकोत्यागकेसर्वव्यापीजोईश्वरआ
त्माहैतिसकाव्रसन्नताथितितत्रशब्दकोउ
चारकरकेमोक्षकांक्षीजोपुरुषहैंअ
र्थयहकर्मोकेपुनःपुनःकरनेकरशु
द्धहैंअंतःकरणजिन्होंकेअर्थयहत्वंप
दकाशोधनकरयाहैअरतत्पदसाध्य
एकताकोचहतेहैं॥सोयज्ञदानतपकी

जोनानाप्रकाररच्याहैसोकैसेंहूंईश्व
रअर्पणकरतेहैंइत्यर्थः॥२५॥औरअंतः
करणकीशुधनभितकर्मकर्ताजोपुरुष
हैंसोसर्वकर्मोंकीसिधार्थसतशब्दका
उच्चारकरेंएहहैश्लोककरकहतेहैं॥
श्लो०॥सद्भावेसाधुभावेचसदित्येत
त्प्रयुज्यते प्रशस्तेकर्मणितथासच्छ
ब्दःपार्थयुज्यते॥२६॥अर्थयहसत
भावविषेपुनःसाधुभावविषेसतशब्
दएहऐसेजोरीयतहै।तैसेप्रशस्तक
र्मविषेहेपार्थसतशब्दऐसेजोरीयतहैहे
पार्थ॥भावयेपुत्रादिकेजन्मविषेअ
रुतिनकेसाधुभावविषेअरुतैसेप्रसि
धकर्मजोविवाहआदिकहैंतिनविषेअरुती
अरस्तऐसेशब्दजोडीयेगृहस्थधर्मा
चारीपुरुषोंनेअंतःकरणशुद्धिनरमित

अथवा और कपुरुष परमेश्वर के पावनता
को है कामना जिसको सो पुरुष सज्ञान क
हीये सत आत्मा देहादिकोंतें भिन्न है और सा
भावविषे और साधु भाव कहीये चतुष्टे सा
धन की जो सिद्धता है इस भावविषे अरु
प्रशस्त कर्म कहीये निःकाम [illegible]तादि
इन भावविषे सत शब्द को स्मर्ण करे
सत शब्द कहीये मैं नाम रूप नहीं सत स्वरू
प हों जो कछु करोंगा सो सिद्ध होवेगा॥
२६ श्लो० यज्ञे तपसि दाने च स्थितिः स
दिति चोच्यते॥ कर्म चैव तदर्थीयं
सदित्येवाभिधीयते॥२७॥ अर्थ यह
की यज्ञ तप दान इनमें स्थित विषे सत ऐसे
कहीयत है और तदर्थी जो कर्म है तिस
की स्थित विषे सत ऐसे निश्चय करी
यत है॥ भावयो यज्ञ तप दान जो सो इन है
को स्वरूप पूर्व निरूपितं है और इतन की

रसो श्रद्धाजोकर्म है तिन नविषे सत शब्द
जोरीयत है॥ अर्थ यह ऐसो श्रद्धा होवे ऐसो हृदो
वे ऐसे भावना करीये इती॥ २७॥ अब जो
अश्रद्धा कर के जो यज्ञादिक है सो निःफ
ल है इन को कहते हुये अध्याय समाप्त क
रते हैं॥ श्लो०॥ अश्रद्धया हुतं दत्तं तप
स्तप्तं कृतं च यत्॥ असदित्युच्यते पा
र्थ न च तत्प्रेत्य नो इह॥ २८॥ अर्थ यह
अश्रद्धा रहित जो होम है दान है अर
तप तपता है अर जो कर्म है सो असत
कहीयत है हे पार्थ तिन का फल न परलो
क विषे है न इन लोक विषे है॥ भाव यह
अर्थ धर्म की ऐसी श्रद्धा अश्रद्धा कर होता है
जो अश्रद्धा बिना यज्ञादिक करता है सो परले स
कोन स्वर्गादिक की प्राप्त है न इन लोक विषे
विचार चेतका भोको प्राप्ति होती है अर ने
थ यह व्यर्थ ही है॥ इति सप्तदशो अध्याय

श्रीगणेशायनमः अथ अष्टादशवर्नन होवे है॥ इसतनायबहूक केआदिअध्या यविबेक्षेत्र क्षेत्रज्ञअरचक्षेत्रपुरुष केनिर्णयकर श्रीभगवानजी अर्जुनको जीवेश्वर केवाच्यलक्ष स्वरूपको दिखा यकरएकताजणाई॥तिनतेंपीछेंचतु र्दशेअध्यायकर त्रिगुणसकार्यके निर्णयकर अर्जुनके अपूर्णनिर्गुण स्वरूपके ज्ञानकर स्वस्वरूपविषेस्थि तदिखाई॥अरपंचदशेंअध्यायविषे जगतकेवृक्षरूपवर्ननद्वारामनका नाशजणाया॥अरषोडशेअध्यायवि षेदैवीआसुरीसंपताकेवर्ननिकरवा सनाक्षयकास्वरूपजणाया॥सोएह्ले मनोनाशवासनाक्षयरवेदकसन्यासहे तिसतेंपीछेंसप्तदशेंअध्यायकरयज्ञ

९८

नपद्वान निःकामकरणेकरजीवन्मुक्ति
कोव्यवहारजनाया॥अबइसअध्यायन्नौ
अध्यायखेसंपूर्णगंर्थकासमुच्चय
अरधउकरजीवन्मुक्ताअरमध्याकी
समाप्तकहेगे॥आरंभविषेअर्जुनकेप्र
श्नोतरद्वारासन्यासतत्त्वअरत्यागत
त्त्वकास्वरूपश्रीभगवानजीकहेगे॥
ननुसन्यासअरत्यागकातोएकतत्त्वहै
अर्जुनकारभेदरभेदकरपूछणा
अरश्रीभगवानजीकारभेदरभेदक
रउत्तरदेणाकाहेतेहै।उत्तर।यद्यपि
सन्यासअरत्यागएकहैपरंतुईहांसं
न्यासशब्दकरआश्रमसन्यासका
कहणाहैअरत्यागशब्दकरत्यागस
न्यासकानिरणयहै।सोरजैसीतिंअह
मेअध्याइविषेश्रीभगवानजीआ
श्रमरूपसन्यासकोरदिखायाहै॥

इसतें ईहां अष्टादश अध्याय विषे श्री
भगवान जी संक्षेप कर सन्यास प्रश्न का उत्त
र कहेंगे अरु त्याग प्रश्न के उत्तर को विस्तार
कर कहेंगे ॥ अर्जुनोवाच ॥ श्लोक ॥ सन्या
सस्य महाबाहो तत्त्वमिच्छामि वेदितुं
त्यागस्य च हृषीकेश पृथक्केशिनिषूद
न ॥१॥ अर्थ यह सन्यास का तत्त्व जान्या
चहता हूं हे महाबाहु च पुनः त्याग का
तत्त्व जान्या चहता हूं हे हृषीकेश भि
न्न भिन्न कर हे केशी नाशक ॥१॥ ईहां
महाबाहो हृषीकेश केशिनिषूदन एक चा
र तीन संबोधन अर्जुन के श्रीभगवान
प्रति प्रेम से हेत हैं अथवा अन्तर्यामी रूप
ता स्वरूप पावता का है ॥१॥ श्रीभगवा
नोवाच श्लो० काम्यानां कर्मणां त्यागं
सन्यासं कवयो विदुः ॥ सर्वकर्मफल

इस अर्जुन के प्रश्न का ... उत्तर कहें हैं ॥३

त्यागं प्राहुस्त्यागं विचक्षणाः॥२॥ अर्थ
ये काम्य कर्मों के त्याग को कव संन्यास
कहते हैं॥ सर्व कर्म फल त्याग को विचक्ष
ण त्याग कहते हैं॥ भाव ये काम्य कर्म कहि
ये पुत्रकामो यजेत स्वर्गकामो यजेत इत्या
दि कर्मों का जो त्याग॥ अर विधपूर्व विहि
त जो कर्म है जो संन्यासी चौथे ब्राह्मण
दि उपनिषदों विषै कहे हैं सो करे इसके
ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है संन्यासी
कै फेर तहां ज्ञान को पाइ के मुक्ति होती है
सो इनका संपूर्ण निर्णय अष्टमे अध्या
व विषै है॥ अर सर्व कर्म फल त्याग को
अर्थ यह वर्णाश्रम अनुसार कर्म सक
ल करने अर फल का त्याग इसको बुद्धि
मान त्याग कहते हैं सो इस त्याग संन्या
स का स्वरूप उपनिषदों विषै बहुत स्था
नों विषै वर्नन है॥ अर तिनके अनुसार

अं संन्यास

जीवन्मुक्तके मंथरखे बेहुं बडु विस्तार है
तैसे याज्ञवल्क्यजी मैत्रेयीको उपदेश कीया
है सो रखे चकहता जो धर्म हैं सो है तिसको
त्याग कहते हैं ॥२॥ इस द्वितीय श्लोक करि
के सांख्यै पकर कहा जो त्याग कर्म यहि है
सो तृतीय श्लोक करिके स्फुरणा रचनन्या
यवर वादीयाके मतको निरूपण कर
ते हैं ये चतुर्थ श्लोकते लेकर आगे तिस त्या
गके स्वरूपके विस्तारको कहेंगे ॥ श्लो० ॥
त्याज्यं दोषवदित्येके कर्म प्राहुर्मनीषि
णः ॥ यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यमिति
चापरे ॥३॥ एक मनीषी सर्व कर्म दोषव
तू त्याग कहते हैं ॥ अरु और यज्ञदानतपका
जो कर्म है नहीं त्यागने योग्य ऐसे कह
ते हैं ॥ मनीषी कहीये सांख्य सो कहते हैं
सर्व कर्म्म अनित्यफलवान् हैं दोषरूप
त्यागने योग्य हैं काहेते जो

कर्मवित्॥ सो इसका अनुमान करके आर्थ
को स्पष्ट कर दिखावते हैं॥ जैसे यज्ञ कर्म
जो है तिस विषे पशु हनन करे एह वाक्य
है सो हिंसा अति नीच कर्म है तैसे कहा है
न्या स्त्रो विषे जो पुरुष हिंसा करते हैं अरु
तिस हिंसा ही को अपणा धर्म मानते हैं
सो नाम स तामसी है सर्व कर्म दोष के
रे धूम कर अग्नि जैसे आवरया है॥ स
र्व कर्म श्रुति त्याग जनावे इत्यादि प्रमा
णो कर कर्म का त्याग बने है सो इसक
र एह जनाया जो सर्व कर्म फलो सहित
त्याग करीये॥ इति पूर्वार्धः॥ अब उत्त
क राध कर मीमांसा इनको दूषता है॥
ननु आमनाय जो वेद है सो सकल क
र्त्तार्थ है॥ तहां सूत्र कहे है आनर्थ
क्य मतदर्थानाम् १ तद्भूतानां क्रिया

पेनि समन्वियः र्यां कान्वर्थ अतद
र्थ कही ये क्रियार्थ रहत जो वाक्य हैं ति
नों के अनर्थ भाव है॥ १ अरु जे तद्भूत कही
ये क्रियार्थ कर व्याप्त हैं तिनों के क्रिया
र्थ कर के समन्वियहै॥ औसे तहां तहां जे
मिन कर के वेद के क्रियापरत्व के कथन
तें उपरने बितों के भी क्रियापरत्व युक्त है॥
जैसे कह्यो है तं त्रि वार्त्तिक कृत्तने इन
य स्वार्थ कनों के प्रतिपादन कर के उपरने
बदाउ के निराकांक्षत्व व्याख्यात है अ
र्थ यह उपरने बद कू आत्मज्ञानतें निराकां
क्ष हैं अर्थ यह क्रियापर हैं॥ अरु श्रुतौ भी
तैसे क्रियापरत्व हैं सो दिखावें हैं॥ अक्ष
य्यं ह वै चातुर्मास्ययाजिनः सुकृतं भ
वति अपाम सोमममृता अभूमाइत्या
दि बहुत श्रुती है॥ अरु सांख्य जो कहता है

पशु हननन करे सो उनका वाक्य अबल है
और श्रुतिवाक्य एह है जो यज्ञ न रमि पशु
को मारे॥ सो ऐसे यज्ञ तप दान इन्ह याका
त्याग न करे और निषेध्य कर्मों का सर्वथा
त्याग है॥ ५॥ इस प्रकार कहता जो भी
ॐ मांस है तिसके वचन का अंगीकार
है काहेते जो मोक्ष कर्म जन्य माने है और क
र्त्ता कर्म का साक्षव माने हैं सो वास्तव नही
तहां कहते हैं कर्मरहित तो लोकः छीयते एव
मेवा मुत्रपुण्य रहिते तो लोकः छीयते इति
तहां श्रीभगवान जी कर्त्ता असंग है और क
र्म चित्त शुद्धि न प्राप्त है इसका सिधांत निषि
त अपरोक्ष मत अनुसार त्याग के स्वरूप को
विस्तार कर कहते हैं॥ श्लो०॥ निश्चयं शृ
णु मे तत्र त्यागे भरतसत्तम॥ त्यागो हि
पुरुषव्याघ्र त्रिविधः संप्रकीर्तितः ४
अर्थ यह हे भरतकुल विषे श्रेष्ठ तहां त्या

गरविबेमेरेरनिश्चयको श्रवणकरो॥ हे पुरु
षों रविषे सिंहत्यागरनिश्चयकर त्रिविधकहा
है॥ भावयेसे सत्यागरविबेमेरेरनिश्चयको
सुनो॥ इस श्लोक कहरो कर भगवान् का
एह प्रयोजन है जो सांख्यीकर कस्या जो
कर्मोंका नबंध है अरु मीमांसा करके कै
हा जो कर्मोंकी रसिद्धता है सो दोनो मत भ
गवान् के अनंगीकार हैं काहेतें जो कर्मों
के न करो कि रअंतःकरण की अशुधा
तें सांख्यमत कर कहा जो सन्यासधर्म
है सो रसिद्ध नहीं होता॥ तातें सांख्यमतका
अनंगीकार है॥ अरु रसिद्धरूप कर कर्मों
का ग्रहण करणा अरु कर्म रसिद्ध मोक्ष को
परमपुरुषार्थ मानणा एह जो मीमांसा
का मत है सो भी अनंगीकार है॥ तातें ग्रंथ

म कर्मयोग के अंगीकार कीयेते अंतः
करण को शुद्ध करके त्याग सन्यास का
अंगीकार करे तें सत्याग सन्यास के
स्वरूप जानावणे न मितृ विविधत्या
ग श्री भगवान् जी कहा है भरत सत्त
म अर्जुन को संबोधन करणा श्री भ
गवान् जी का कर्मा का त्रिविधता हेत ते
है अरे पुरुषव्याघ्र अर्जुन प्रति संबो
धन त्याग सन्यास र सि धहेततें है। अ
र्जुन के त्याग सन्यास की प्राप्ति है जो का
हे को सन्यास अर त्याग का प्रश्न अ
र्जुन करया है इतिचेत्याह लोक अनु
ग्रह हेत अर्जुन का प्रश्न है अ थवा स्व
पका जो वन्मुक्त की परउवा रसि धी है
६॥ संग को त्याग ... अर फल की त्याते

कारकर्म करि लोकअनुग्रहार्थ

रहित होवे न कोई सो ही त्याग संन्यास है सो

इन संन्यासन ने जो कर्म करणो है सो दि

खावते हैं॥ श्लो॰॥ यज्ञदानतपः कर्म न

त्याज्यं कार्यमेव तत् यज्ञो दानं तप

श्चैव पावनानि मनीषिणां॥ प अ

र्थ यह यज्ञ दान तप का जो कर्म है न

हीं त्यागणा योग्य करणे योग्य है सो॥

यज्ञ दान तप जो हैं निश्चय कर मनी

षीयों के पवित्र करता हैं॥ भाव यह

यज्ञादि जो कर्म हैं जब निःकामता

सी इनका अभ्यास रहैं तसेवता है तब तिस

के अंतःकरण शुध होते हैं अर फिर

उनके हू सुख दाता है अर ज्ञानवानके हू

जीवन्मुक्तता के रसिध करता है॥ मूरिख

के हैं सहकाम यज्ञादिकों ये स्वर्गादि सुख
के दाता हैं तातें यज्ञादिक कर्म करये हुये
सर्वकै सुखदाता होते हैं॥ पा॥ अब श्री
भगवानजी इस यज्ञादिक कर्म के करणो
खिबे अपणो उत्तम स्तंभ्यपको कहते हैं
॥श्लो॰॥ एतान्यपि तु कर्माणि संगं त्य
क्त्वा फलानि च॥ कर्तव्यानीति मे पार्थ
निश्चितं मतमुत्तमं॥६॥ एह जो तु पुनः
कर्म हैं संग को त्याग कर च पुनः फलों
को त्याग कर करणे ही हैं हे पार्थ एह
मेरे तां ई उत्तम मान्य है॥ भाव यमैं क
र्ता हूं अरु इसका फल मुजके होवेगा इ
स भाव को त्याग कर परंपरा रीत क
र वेद आज्ञा अनुसार यज्ञादि करणो
ही है ऐसे अवश्य मानकर कर्म कर
णा ही है सो एह निश्चय मेरे को उत्तम
भाव कर मान्य है॥६॥ अब नाम सत्या

गत्यागनरमेनवर्ननकरतेहैं।। श्लो०
नियतस्यतुसन्यासःकर्मणोनोपप
द्यते मोहात्तस्यपरित्यागस्तामसःप
रिकीर्त्तितः।।७।। अर्थ यह नित्यकर्मो
काजोसन्यासहैनहीयोग्य।।मोहतेंजोति सो
सकापरित्यागहैसोत्यागतामसीकहा
है।। भाव येगायत्रीसंध्याआदिजोनि
त्यकर्महैंसोइनकात्यागसर्वथान
हीबरना।।मोहादिकोंकेवशतेंजोनि
नकात्यागकरेसोत्यागअंतःकर्णके
मलनत्वकावधकरनाहेसोएहअनंगी
कारहे।।७।।अवराजसीत्यागकास्वरू
पकहतेहैं।।श्लो०।।दुःखमित्येवयत्क
र्मकायक्लेशभयात्त्यजेत्।।सकृत्वा
राजसंत्यागंनैवत्यागफलंलभेत्।।८
अर्थ यह जोकर्मकरणादुखहीहैएह

रनेक्लेकर शरीर कष्टके भयत्तें कर्मो
कात्याग करत्ता है सोकरया हैराजसी
त्यागसो नहीं त्यागके फलकोलहत्ता॥
भावये राजसी जो पुरुष हैं जिन्नों के दे
हविषे अत्तिप्रीत है सो कर्म करणवि
षेजो शरीर के कष्टहोता है तिस कष्टतें
भयभीत होयेजो कर्मो का त्याग है सोत्या
गराजसी है सो ऐसात्यागी त्यागकेफ
लकोनहीं पावत्ता॥काहेतें जो त्वंपदका
शोधन नहीं कर्या सो फलजो पुन्यक
तलोकों की प्राप्ति है अथवा चित्तकी
शांत्ति है सो नहीं पावत्ता॥जैसी तें कर्मो
के स्वरूपका त्याग है तिसीतें पुन्यक
तलोकों की अप्राप्ति है अरजैसी तें चि
तकी अशुधता है तिसीतें अशांत्तता है
इत्यर्थः॥८ अबसात्विकी त्यागवर्नन
करै हैं॥श्लोक॥कार्यमित्येवयत्कर्म

न्येयतं क्रियतेर्जुनः॥संगंत्यक्ताफ
लंचैवसत्यागःसात्त्विकोमतः॥९॥अ
र्थयहजोकर्मनिरंतरकरणांहीहैऐ
सेनिश्चयधारकरकरीयतहेहेअर्जुन
संगकोत्यागकरचपुनःफलकोत्याग
करसोत्यागसात्त्विकीमान्यहे॥भावयै
कर्मनिरंतरकरीयेंकर्तृभावअरुफ
लाभिसंधतेरहितहोइंसोत्यागसात्त्विकी
मान्यहेअर्थयहजोपुरुषकर्मसदैव
करताहेअरुअभिलाषाफलोकीनहीं
सोऐसोत्यागीसात्त्विकीहेइत्यर्थः॥९॥
सोऐसापुरुषसुखदुःखविषेसामान
हे॥श्लो०॥नद्वेष्ट्यकुशलंकर्मकुशले
नानुषज्जते॥त्यागीसत्त्वसमाविष्टो
मेधावीछिन्नसंशयः॥१०॥अर्थयि

अकुशलकर्मविषेनहीहैषकर्त्ताअरकुशलविषैनहीलिपायमानहोताजोत्यागीबलयुक्तहैअरबुद्धिमानहैअरछिन्नसंशयहै॥भावयेबलयुक्तकहीयेअंत:करणकीशुद्धताकरसैदेवआत्मपुरुषार्थवानहैअरबुधमानकहीयेकामादिकोंकावंचकहेअरछिन्नसंशयकहीयेनिदिध्यासनकीधृढताकरजीवेश्वरादिभेदोंकानाशकहैऐसाजोपुरुषहैसोअकुशलकर्मकीप्राप्तिवशातेप्राप्तिसंतिद्वेषकोनहीकरताअरकुशलकर्मकीप्राप्तिकरप्राप्तिसंतिलिपाइमाननहीहोता॥कुशलअकुशलकहीयेप्रारब्धकरव्यवहारिकप्र

निश्चय कर॥

माशुभकी प्राप्ति॥१० अकुशलक
र्मका त्याग क्यों न होके तो इस्ति चेत्याह
श्लोः॥ न हि देहभृता शक्यं त्यक्तुं क
र्माण्यशेषतः यस्तु कर्मफलत्यागी
स त्यागीत्यभिधीयते॥११ अर्थ यह
देहधारी संपूर्ण कर्मत्याग कौं नहीं
सामर्थ॥ जो कर्मफलत्यागी है सोई
त्यागी निश्चय कर ध्यते है॥ भाव यह ज्ञानी
अज्ञानी देहधारी जो जीव है सो कर्मोंके विना
ना रहते होवनेको सामर्थ नहीं॥ नहीं अ
नुमान है देह कर्मकी पेरवना रस्थि तमही
होनका है नेंजो देहका उपादान कर्म है सो
कारण विना कार्य कैसे स्थित होवे जैसे
नाटकरचैतय सूर्यका नाटक विना रस्थि
त नहीं होती॥ ताते यह निश्चय है जो जीत
ने पर्यंत देह है सो कर्मोके स्वरूपका त्या
ग कर चैतन नहीं होता॥ ताते जो कर्मफल

त्यागी है सो ई त्यागी है॥११ ननु कौन हैं क
र्मफल इत्ते चेत्याह॥ श्लो॥ अनिष्टमिष्टं
मिश्रं च त्रिविधं कर्मणः फलं॥ भवत्य
त्यागिनां प्रेत्य नतु सन्यासिनां क्वचित्॥१२
अर्थ यह अनिष्ट इष्ट च पुनः मिश्र त्रि
विध कर्म का फल है सो होता है अत्या
गीयों को मरणे पीछे नहीं होता सन्या
सीयों को क[illegible]॥ अनिष्ट कहीये अर्वा
चीन नर्कादि अर इष्ट कहीये वां चीन
स्वर्गादि अर मिश्र कहीये सामान मन
नुष लोक अर्थ यह सात्विकी कर्मों का
फल स्वर्गादि लोक की प्राप्ति है अर ता
मसी कर्म का फल नर्कादि लोक की प्रा
प्ति है अर राजसी जो सात्विकी तामसी मि
श्र हैं तिन का फल मनुष्यादि लोक है॥
जो सो एह फल अत्यागी हैं सो तिन ही को
होता है मरणे पीछे॥ अर जो कर्मफ
ल त्यागी सन्यासी हैं सो मुक्ते स्वस्व

पहैजन्ममृत्युबंधनरत्तेनकेनहीरत्यार्थः
१२ अबकर्मकेंकारणांकोकहतेहैं॥श्लो०
पंचैतानिमहाबाहोकारणानिनिबोध
मे॥सांख्येकृतांतेप्रोक्तानिसिद्धयेस
र्वकर्मणां॥१३॥ अर्थयेसकलकर्मों
कीसिद्धिकेवेएहपंचकारणहैंहेमहा
बाहुसोकहेहैंसांख्यकृतांतविषेसोई
ईहांमुजनेंश्रवणकरो॥भावयेसांख्य
कृतांतकहीयेयमनेजोनाचकेनप्रति
सांख्यमार्गकाउपदेशकरयाहैतेसर्व
वेकर्मकेकरणरवेवेंकाराकहेहैंसोई
मैंवक्ष्यमाणश्लोकविषेकहताहंतूंसु
णा॥श्लो०॥अधिष्टानंतथाकर्ताकरणं
चपृथग्विधं॥विविधाश्चपृथक्चेष्टादै
वंचैवात्रपंचमं॥१४॥अर्थयिहअधि
ष्टानजोहैतैसेकर्ताजोहैचपुनःपृथग्वि
धजोइंद्रियहैंअरविविधजोभिन्नभिन्न

चेष्टा है पुनः दैव [illegible] पंचम है ॥ अधिष्ठान
कहीये देह कर्त्ता कहीये सो अधिष्टान रूपी चिद्
भास अरु अनेक प्रकार के जो इंद्रिय हैं पंच
ज्ञानेंद्रिय पंच कर्मेंद्रिय अरु विविध चे
ष्टा जो प्राणों की है अर्थ यह प्राण अपा
न समान व्यान उदान अरु नाग कूर्म कृ
कल देवदत्त धनंजय एह जो दश प्रकार
प्राण है तिन का जो स्पंदन अरु भेद व्यापार
है अरु प्रारब्ध जो है सो एही पंच कर्म कि
रणे विषे कारण है इति पूर्वान्वयः ॥
१४ ॥ किंच ॥ श्लो० ॥ शरीरवाङ्मनो
र्भिर्यत्कर्म प्रारभते नरः न्याय्यं वा
विपरीतं वा पंचैते तस्य हेतवः ॥ १५ ॥
अर्थ यह शरीर वाणी मन कर जो क
र्म आरंभ करता है नर न्याई अथवा
विपरीत एह पंच तिस के कारण है ॥
भावये न्याई कहीये योग्य अरु न्याई कही
ये अयोग्य कर्म सो इन के करणे का
कारण एही पूर्वोक्त पंच है इति

पथार्थ८
ज्ञानी अज्ञानी के कर्म करत्तापणि बिजे एही
पंच सामान कारणहोय ते तो ज्ञानी अज्ञानी
का विशेष्य कहि है ते है इसति चेत्याह॥ श्लोक॥
तत्रैवं सत्ति कर्त्तारमात्मानं केवलंतु यः
पश्यत्यकृत बुद्धित्वान्न स पश्यति दुर्म
तिः॥१६ अर्थ यिह तहां ऐसे संत्ते जो
केवल आत्माको कर्त्ता देखता है अक
त बुद्धितें सो दुर्मतीं नहीं देखता॥ भावये
तहां ऐसे संत्ते कहीये जैसी तें कर्त्ता एही
पंच है इनको न समझकर केवल आपको
जो कर्त्ता मानता है आप कहीये चेतन्य सर है
तो भन्न संघात को जो आप मान्या है सो पुरु
ष विपर्य ज्ञानतें यथार्थ नहीं देखता इस
तें जैसा ते अज्ञानी ऐसे देखता है ता
से नहीं देखता तातें इन बंधनोतें विरले मु
क्त है सो ईश्वर रहे खावते हैं॥ श्लोक॥ य

स्यनाहंकृतोभावोबुद्धिर्यस्यनलिप्य
ते॥हत्वापिसइमांलोकान्नहंतिनन
बध्यते॥१७॥अर्थयेजिसकेनहींअहं
कृतभावअरबुद्धिजिसकीनहींलि
पायमानहोती सोपुरुषइनलोकोंको
मारताहोयाहूनमारताहैनबधायमा
नहोताहै।भावयेस्थूलसूक्ष्मकारणा
येजोशरीरहैंएहमैंहूंइनअभिमानतेंर
हितहैइसीतेंकर्त्ताभावतेंरहेतहैकर्मकि
त्वा॰ र्त्तेसंस्तेहंबुधेजिसकीरागद्वेषतेंरहे
तेहैंसोपुरुषपरार्थवशतेंअथवावर्ण
धर्मस्वभावतेंइनसकललोकोंकोमा
रेतोहूबधायमाननहींहोता॥काहे
तेजोहंताभावतेंरहेतेहै॥१७इनपूर्व
कहेहैश्लोकोकरअज्ञानिज्ञानीकेभेद
कोदेखायाअबकर्मप्रेरकअरकर्म
श्लो॰ संग्रहकोदेखावतेहैं।ज्ञानंज्ञेयंपरि
ज्ञातात्रिविधाकर्मचोदना॥करणं

र्मकर्तेतित्रिविधः कर्मसंग्रहः १८

अर्थ यह॥ ज्ञान जो है ज्ञेय जो है ज्ञाता जो है

एह त्रिविध कर्म प्रेरक है॥ अर करण

कर्म कर्ता एह त्रिविध कर्म संग्रह है॥

ज्ञान कहीये जिस कर पदार्थ की यथा

र्थ ज्ञान होवे॥ अर ज्ञेय कहीये जो ज्ञा

ने करि यो कर विषय करीये अर ज्ञाता क

हीये साभास साक्षी चैतन्य सो एह त्रिवि

ध कर्म प्रेरक है अर्थ यह जब इन कर

पदार्थ निश्चय होता है तब कर्ता कर क

र्म सिद्ध होता है॥ अर करण कहीये क

र्मेंद्रिय अर कर्म कहीये जो प्राण अर क

र्मेंद्रिय कर स्फुरणा होवे॥ अर कर्ता क

हीये प्राण संबंधी साभास ज्ञान परिणा

ता॥ एह त्रिविध कर्म संग्रह है अर्थ य

ह इन तीनों एकत्र भिले ते पदार्थ को क

र्म किया जाता है इति॥ १८॥ अब ज्ञान

कर्मकर्त्ताके त्रिविध स्वरूप को दृष्टा
न्तों कर कहते हैं॥ श्लो॰ ज्ञानं क
र्म च कर्त्ता च त्रिधैव गुणभेदतः॥
प्रोच्यते गुणसंख्याने यथावच्छृ
णु तान्यपि॥१९॥ अर्थ यह ज्ञान
जो है कर्म जो है कर्त्ता जो है त्रिधा है गु
णभेद तें कहा है गुणसंख्य विषे
तिन्हों को तूं सुण॥ भाव ये पूर्व श्लोक
विषे कहा जो ज्ञान आदिकों का स्वरूप
है सोई ज्ञान कर्म कर्त्ता त्रिधा है सात्त्वि
क आदि गुणों के भेद तें इति॥१९॥
सात्त्विकज्ञानमाह॥ सर्वभूतेषु येनै
कं भावमव्ययमीक्षते॥ अविभक्तं
विभक्तेषु तज्ज्ञानं विद्धि सात्त्विकं॥
२०॥ सर्व भूतों विषे जिन कर एक
अव्ययं को देखता है पुनः विभक्तों
भाव-

विषे अविभक्त को देखता है सो ज्ञान सात्त्विक है॥ भाष्य॥ अत्र यक्रम निरूपण तें परब्रह्म का स्वरूप जो सत्वम स्यादि महावाक्य है तिन तें उपजा जो अंतःकरण की वृत्ति विषे ज्ञान है सो सात्त्विकी ज्ञान है जिस कर सर्व भूतों विभक्तों विषे अविभक्त एक अव्ययभाव को देखता है अर्थ यह सकल जो भिन्न भिन्न देह हैं अरु सकल सूर्यादि जो भिन्न भिन्न पदार्थ हैं तिन्हों विषे परमात्मा अद्वैत एक है॥ एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म॥ एक एव हि भूतात्मा भूते भूते व्यवस्थितः एकधा बहुधा चैव दृश्यते जलचंद्रवत्॥ अरु सो आत्मा अव्यय है॥ काहे तें जो है विकारों का साक्षी है जो विकारों का

साक्षीहैइतिसबकेरविकारस्पर्शीनहीं
करतो॥जैसेसूर्यकरप्रकाशरूपजो
रूपहैसोइतिनरूपोंकेनाशतेसूर्य
अनाशीहैइति॥ननुसात्त्विकीज्ञान
कहतेहैंतोएहज्ञानगुणमयहोया॥
इसकोमहावाक्यजज्ञानक्योंकहते
होमहावाक्यजज्ञानतोगुणातीत
होताहै॥उत्तर परिच्छिन्नपदार्थोंके
संबंधतेगुणमयहैएहज्ञानप
रंतरनिदिध्यासनकीयाहोयागु
णातीतहोजावेगा॥अर्थयहहैगुणा
नुवेधअरगुणाननुवेधस्वरूपकर
कहाजोएहज्ञानहैसोनिदिध्यासन
कीपरिपक्वतातेंगुणमयवृत्तिकेप
रित्यागतेंअरपदार्थोंकेमिथ्यात्व
धेडरनिश्चयतेंएहज्ञानगुणातीत

होजावेगा॥ इत्यर्थः॥२०॥ अब राजस ज्ञान माह॥ श्लोक॥ पृथक्त्वेन तु यज्ज्ञानं नानाभावान्पृथग्विधान्॥ वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तज्ज्ञानं विद्धि राजसं॥२१ अर्थ यह जिस ज्ञान कर सर्व भूतों विषे नानाभावों पृथग्विधों को पृथक् करके देखता है तिस ज्ञान को राजसी जाणो॥ भाव ये नैयायिकादि जो शास्त्रकार हैं जिस ज्ञान कर स्थावर जंगम भूतों विषे नानाभाव पृथग्विधों को पृथक् पृथक् कर देखते हैं अर्थ यह एह पृथवी है एह जल है इत्यादि नानाभाव भिन्न भिन्न देखते हैं तिस ज्ञान को राजसी जाणो॥ २१॥ तामस ज्ञान माह॥ श्लोक॥ यत्तु कृत्स्नवदेकस्मिन्कार्ये सक्तमहैतुकं

अतत्वार्थवदल्पंच तत्तामसमुदा
हृतं ॥२२॥ अर्थ यह जिस ज्ञानकर
एकही कार्य विषे संपूर्ण जैसे सक्त
होया अरु अहेतुक अरु तत्वार्थतें
रहित होया अरु अल्प भाव होया देख
ता है सो तिस ज्ञान को तामसी कहते हैं
॥ भाव ये एकही कार्य विषे अर्थया आत
मा विषे संपूर्णवत कहीये परपूर्ण
है ऐसे ॥ सक्त कहीये इतना मात्र है
अरु अहेतुक कहीये युक्त प्रयत्न अर
परमार्थतें रहित अरु अल्पबुद्धि ऐ
सा जो पुरुष है सो देखता है जिस
ज्ञानकर सो ज्ञान तामसी है ॥ अर्थ
यह मूरखि कर्मलेपट को एकही प
दार्थ विषे तामस ज्ञान के वशतें
संपूर्ण आत्म भावना होती है इति

इति श्रीम...
११
ज्ञान के भेद को कर है कर अब कर्म
के भेद को कहते हैं॥ श्लो०॥ नियतं
संगरहितमरागद्वेषतः कृतं अ
फलप्रेप्सुना कर्म यत्तत्सात्त्विक
मुच्यते॥२३॥ अर्थ यह अफलप्रे
प्सीयों ने जो कर्म निरंतर संग रहि
त अरु राग द्वेषनें रहित करीयत है
सो सात्त्विकी कहीयत है॥ भावये लो
क परलोक फल दीनें रहित अरु अ
हं कर्ता अभिमान शून्य औसे जो पुरुष
हैं सो राग अरु द्वेषतें रहित जो निरं
तर कर्म करीयत है सो कर्म सात्त्विकी
कहीयत है॥२३॥ अब राजसी कर्म
कहीयत है॥ श्लो०॥ यत्तु कामेप्सुना
कर्म साहंकारेण वा पुनः क्रियते बु

डुलायासंतडुजसमुदाहृतं॥२४॥
अर्थ ये कामेप्सीयोने अथवासहं
कारीयोने जोकर्म बहुतयत्नकरक
रीयतहै सोकर्मराजसी कहीयतहै
॥भावये पुत्रस्वर्गादिकामनावानजो
पुरुषहै अथवा कामनातें रहित अर
कर्ताहं इत्ति अभिमानसहित ऐसेपु
रुषकर करया जो बहुतयत्नकरक
र्महै बहुतयत्नकहीयें पंचाग्नितपा
वतादिहै सोऐसोकर्मराजसीकही
यतहै इत्ति॥२४॥ अबतामसीकर्म
कहीयतहै॥श्लो० अनुबंधंक्षयंहिंसा
मनवेक्ष्यचपौरषं मोहादारभ्यते
कर्मयत्तत्तामसमुच्यते॥२५॥ अर्थ
यह॥ अनुबंधरूपरहिंसायुक्तरूया
अरपुरुषार्थअपरोकोनहीदेखनाहोय

मोहत्तें जो कर्म आरंभ करीयत्त है सो
कर्मतामस कहीयत्त है॥ अनुबंध
कहीये फल जीसका बारंबार जन्म
मृत्य है अरु क्षय कहीये धनादिको का
नो ग्रारहिं सो कहीये परपीडा अरु पुरु
षार्थ अपरोकोन देखणा जो एह कार्य
मुजते सिद्ध होवेगा अथवा भंग हो जावे
गा इन लक्षणो सर हेत केवल मोहतें जो
कर्म आरंभ करीयत्त है सो कर्मतामसी
कहीयत्त है॥२५॥ त्रिविधकर्म को कर है
के अब त्रिविध कर्ता को कहीयत्त है॥ श्लो
का॥ मुक्तसंगो नहंवादी धृत्युत्साहस
मन्वितः॥ सिद्धयसिध्योर्निर्विकारः
कर्ता सात्विक उच्यते॥२६॥ अर्थ यह
संगतें मुक्त है अरु अनहंवादी है धीर्य

अरउत्साहसरहितहै अरकर्मकीसि
धिअरअसिधिविषेनिर्विकारहै ऐसाक
र्तासात्विकीकहीयतहै॥ भावयहबुर
ध्यादिकोकेअध्यासतेंररहितहै अर
मलनअहंकाररहितसाकेनहींसुखदु:
खकीप्राप्तिविषेधीर्यसहितहै अर
अंत:करणकीप्रफुल्लतारूपअथवालो
कसंग्रहार्थप्रकारकर्मविषेउत्सा
हसरहितहै अरकर्मकीसिधिअसिधि
विषेहर्षशोकतेंररहितहै ऐसाजोक
र्ताहैसोसात्विकीकहीयतहै॥२६॥ अ
बराजसीकर्ताकहीयतहै॥ श्लो०॥
रागीकर्मफलप्रेप्सुर्लुब्धोहिंसा
त्मकोऽशुचि: हर्षशोकान्वित: क
र्ताराजस: परिकीर्तित:॥२७॥
अर्थयहरागीहै अरकर्मफलप्रेप्सी

हे लोभी है हिंसात्मक है अरु अशुच है अरु हर्ष शोक करि युक्त है ऐसा जो कर्त्ता है सो राजसी कहीयत है॥ भावयेरागी कहीये विषय कामी है अरु फल निमित्त है कर्म करता जो सकाम अरु पराये धन की आशा रखता है अरु अन्य जीवन को दुख देवता है अरु बिना विचार करि कर्म करता है अरु कर्म कर्तव्य ताके विषे स्वच्छ भाव नहीं है हिंसा का कर्त्ता है अरु अशुच कहीये शुद्धि रहित कर्मों ते रहित है अरु लाभालाभ विषे हर्ष शोक संयुक्त है ऐसा जो कर्त्ता है सो राजसी करता कहीयत है इति॥२७
अब तामस कर्त्ता कहीयत है॥ श्लो॰
अयुक्तः प्राकृतः स्तब्धः शठो नैष्कृतिकोऽलसः॥ विषादी दीर्घसूत्री च कर्त्ता तामस उच्यते॥२८॥ अयुक्त

अयुक्त है अरु प्राकृत है अरु स्तब्ध है
शठ है नैष्कृतिक है आलसी है विषा
दी है दीर्घसूत्री है ऐसा जो कर्त्ता है सो
तामसी कहीयतु है। अयुक्त कहीये
युक्ताहार विहारतें रहित है अरु प्रा
कृत कहीये भलेबुरे विचारतें रहित
है अरु गर्वी है शठ कहीये अल्पबुधी
नैष्कृतिक कहीये उद्यमतें रहित अरु
आलसी कहीये निद्रादि शीलवान्
विषादी कहीये शोकीस्वभाव दीर्घ
सूत्री कहीये थोडे कार्य विषे बहुत वे
र लगावता सो ऐसो कर्त्ता तामसी
कहीयतु है॥२८॥ इस प्रकार कहा
जो त्रिविध कर्त्ता है सो तैसका त्रि
विध बुध अरु त्रिविध धीर्य कों त्रिगु
णामें दिखावतु है। श्लोक॥

बुद्धेर्भेदं धृतेश्चैव गुणतस्त्रिविधं
शृणु॥ प्रोच्यमानमशेषेण पृथ
क्त्वेन धनंजय: २९॥ अर्थ यह बुद्धि
जो है अरु धृति जो है च पुनः गुणतें त्रि
विध सुणो॥ कहा है संपूर्ण करि पृथ
क पृथक करि हे धनंजय॥ सात्त्विक
राजस तामस जो तीन गुण है तीन के
प्रयोग तें कर्त्ता की बुद्धि अरु धृति जो
है सो त्रिविध है अर्थ यह सात्त्विक क
र्त्ता के सात्त्विक बुद्धि धृति है अरु राजस
के राजसी अरु तामस के तामसी सो
ए छौं को वरणन करि संपूर्ण कि
हतो हैं सुणो॥ २९॥ सात्त्विकी बुद्धिमाह
श्लोक॥ प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च कार्याका
र्ये भयाभये॥ बंधं मोक्षं च या वेत्ति बु

द्धिः सा पार्थ सात्त्विकी ३० अर्थ यह कार्य अकार्य भय अभय इन विषे प्रवृत्ति अर निवृत्ति अर बंध मोक्ष को जो जानती है सो बुद्धि हे पार्थ सात्त्विकी है। भावयं कार्य कहीये शास्त्रोक्त वर्तन अर अकार्य कहीये शास्त्र अनुक्त आचरन अर भय कहीये द्वैत भाव अर अभय कहीये अद्वैत भाव इन सर्व विषे प्रवृत्ति अर निवृत्ति अर बंध मोक्ष को जो बुद्धि जानती है सो बुद्धि सात्त्विकी कही है अर्थ यिह जो बुद्धि शुभ कार्य देखकर तिस विषे वृत्ति होती है अर अशुभ को देखकर जो बुद्धि तिस ते निवृत्ति होती है अर द्वैत भाव विषे बंध को जानती है अर अद्वैत विषे मुक्ति को निश्चय करती है सो बुद्धि हे पार्थ सात्त्विकी है॥ ३०॥ अ नरा जसी

बुद्धिवर्नेनहोवैहै॥ श्लो०॥ यथाधर्ममध
र्मंचकार्यंचाकार्यमेवच॥ अयथावत्प्र
जानातिबुद्धिसापार्थराजसी॥ ३१॥ अ
र्थयह जिससबुद्धिकर धर्मअधर्मअरका
र्यअकार्यकोनज्योंकात्योंजानतीहैसो
बुद्धिहेपार्थराजसीहै॥ भावयेएहधर्म
हैएहअधर्महैएहकार्यहैएहअकार्यहै
इसकोजोबुद्धियथार्थनहींजानतीसो
बुद्धिराजसीहै॥ ३२॥ अबतामसीबु
द्धिकहतेहैं॥ श्लो०॥ अधर्मंधर्ममितिया
मन्यतेतमसावृता॰ सर्वार्थान्विपरी
तांश्च बुद्धिःसापार्थतामसी ३२ अर्थ
ये पा कहीयेजो बुद्धितमसावृता॰ कही
येतमकरआवरीहोईअधर्मकोधर्म
इतिजोमानतीहै चपुनःसर्वअर्थोंको
विपरीतमानतीहैसोबुद्धितामसी
हैहेपार्थ॥ भावयेपशुहननादिको

अधर्मरूप कर्म है तिसको धर्मरूपता
करमाने अर सर्वपदार्थों को विपरीत
करमाने सो बुद्धि तामसी है ॥ ३२ ॥ अब
धीर्य त्रिविध कहते हैं ॥ श्लो० ॥ धृत्याय
याधारयते मनःप्राणेंद्रियक्रियाः
॥ योगेनाव्यभिचारिण्या धृतिः सा
पार्थ सात्विकी ॥ ३३ ॥ अर्थ यह जि
स धीर्य कर मन प्राण इंद्रियों की क्रि
या धारीयत है अव्यभिचारी योग
कर सो धृति है पार्थ सात्विकी है ॥ भा
व यह अव्यभिचारी योग को आश्रय
कर के जिस धीर्य कर मन की क्रिया
कहीये मन को अशुभ मार्ग तें वर्जक
र तव ध्यानादि विषे लगावणा अ
र प्राणों की क्रिया कहीये त्रिविध प्रा
णायाम करणा अर इंद्रिय क्रिया
कहीये नासाग्र ध्यानादि धारीयत है

सो धृति है पार्थ सात्विकी है अर्थ यह इन अभ्यासों विषे
जो कष्ट की प्राप्त है सो इन को सहणा व्याकुल न होणा इति ३३

ॐ

अथराजसधृत [illegible] वर्नते॥ श्लो०॥ प
पातुधर्मकामार्थानिधृत्वाधारयति
प्रसंगेनफलाकांक्षीधृतिःसापार्थरा
जसी॥ टीका॥ अर्थयहजिसधृतकर
पुनःधर्मकामअर्थकोधारीयतहै
प्रसंगकरफलाकांक्षीहुयासोधृतहै
पार्थराजसाहै॥ भावयेधर्मकहीये
वर्हितकर्मअर्थकहीयेधनादिपदार्थ
कामकहीयेविषेभोगप्रसंगकहीयेए
हतीनोसदैवहोवैंइसनमित्तसदैवफल
कांक्षीहोयापातरनिमितकैंकर्मोकोजिस
धृतकरधारताहैसोधृतहैपार्थराजसी
है॥ ३४॥ तामसीधृतमाह॥ श्लो०॥ यया
स्वप्नंभयंशोकंविषादंमदमेवच॥ न
विमुंचतिदुर्मेधाधृतिःसापार्थतामसी ३५

अर्थ यह धृति सों धरती कर स्वप्न भय शोक
विषाद मदको च पुनः नहीं त्याग कर्ता
दुर्मेधा सो धृती हे पार्थ तामसी है ॥ भा
वार्थ दुर्मेधा कहीये बहुत हें दुष्ट स्वभाव
धृति सें विवेकी सा जो पुरुष है सो धृति स
धरने कर स्वप्नादिकों का नहीं त्याग कर्ता
सो धृती हे पार्थ तामसी है ॥ ३५ ॥ इस प्र
कार पूर्व कहे कर्ता की बुद्धि अरु धृती को
कहि के अब तिसके जो सुख फल होता
है सो तिसके त्रिविधता को दिखावते हैं
॥ श्लो॰ ॥ सुखं त्विदानीं त्रिविधं शृणु
मे भरतर्षभ ॥ अभ्यासाद्रमते यत्र दुः
खांतं च निगच्छति ॥ अर्थ ये तु पुनः अ
ब त्रिविध सुखको मुजते सुणोहे भरत
र्षभ ॥ अभ्यास ते रमता है जहां च पुनः

दुःखों के अंत को प्राप्ति होता है॥ भावयें
तीन तीन सात्त्विकादि कर्त्ता के अभ्यास
वसानें जो सुख होता है सो सुख त्रिविध
सुणो अर्थ यह सात्त्विकी कर्त्ता के सात्त्विकी
सुख है अर राजस के राजसी अर ताम
स के तामसी सो जिस सुख की प्राप्ति क
रता भया ते योगी जो त्रिविध दुःख है सो ति
न्हों के अंत को प्राप्त होते हैं॥ ३६॥ आदौ
सात्त्विक सुख माह॥ श्लो॥ यत्तदग्रे विष
मिव परिणामे मृतोपमं तत्सुखं सा
त्त्विकं प्रोक्तं मात्मबुद्धिप्रसादजं॥ ३७॥ ६
अर्थ जो सुख आदि विषे विष वत है
अर परिणाम विषे अमृतोपमा होता
है सो सुख सात्त्विकी कहा है आत्मबुद्धि
प्रसादतें उपजत है॥ भावयें शमदमादि

के अत्यंत

जो ध्यान साधन हे सो तिसँके तौर विषेक

ष्ट की प्राप्ति होती है ताते विषजैसे होते हैं

अर परिणाम तिक्रो का आत्म अमृता

की प्राप्ति है सो ऐसा सुष सात्त्विकी है

काहेतें जो आत्म विषयकी बुधते उत्प

त्ति है आत्म विषयकी बुद्धिकहीये रज

तम मलके त्यागतें शुध जो केवल सा

त्त्विकी बुद्धि है सो आत्मा को विषयकर

ती है सो तिस बुद्धितें उपजा जो सुष

है सो सात्त्विकी है ॥ ३७ ॥ अब राजसी

सुष माह ॥ श्लो० ॥ विषयेंद्रियसंयोगा

द्यत्तदग्रेमृतोपमं ॥ परिणामे विष

मिव तत्सुखं राजसं स्मृतं ॥ ३८ ॥ अ

र्थ ये विषय इंद्रियों के संयोगतें जो अ

गरव बे अमृतोपमा है अर परिणाम वि

बवैषवत् है सो सुख राजसी कहा है॥ भा
वयेरवैखयभोगआदिरवैखमूढोंको अ
मृतकी न्याईअलौकिक सुखदृष्ट आव
ता है अरुपरे तामरतेन भोगो का ईहांरो
ग कष्टादि अरु आगे नर्कादि होता है ताते
रविखवत् है ताते तिस सुख को राजसी कहा
है॥३८॥ तामस सुख आह॥ श्लो॥ यदग्रे
चानुबंधे च सुखं मोहनमात्मनः॥ निद्रा
लस्यप्रमादोत्थं तत्तामसमुदाहृतं॥३९
अर्थ ये जो सुख आदि विखे अरु संबंध विखे
भी आत्मा का मोहन हारा है निद्रा आलस्य
प्रमाद तें उपज्या है सो सुख तामसी कहा है
॥ भावये पामर जीवों को जो निद्रा आदि
को का सुःख भाया होया है सो सुख ताम
सी है भावये ईहां तेन पामरों का जन्म व्य
र्था है अरु आगे पश्वादि योनी का रतेन को

कोप्राप्तिहै॥३९॥अबएहकहतेहैंजोत्रिगु
णतेंमुक्तकोईजीवनहीं॥श्लोक॥नतद
स्तिपृथिव्यांवादिविदेवेषुवापुनःस
त्वंप्रकृतिजैर्मुक्तंयदेभिःस्यात्त्रिभिर्गु
णैः॥४०॥अर्थयेपृथ्वीविषेअरआ
काशविषेअरदेवलोकविषेजोजीव
प्रकृतजन्यइनत्रिविधगुणतेंमु
क्तिहोसोनहीं॥भावयेचौदहलोकोंवि
षेजोजगतजानकेस्थावरजंगमजीवहैं
अरतिन्होंकेजोकर्महैंअरजोतनभो
गहैंसोसर्वत्रिगुणात्मकहैंइत्यर्थः॥४०
अबमुख्यजोब्राह्मणादिचारवर्णहैंति
न्होंप्रतिविधानबंधकोउपदेशकरतेहैंतिन्हों
केकर्मोंकोरभिन्नरभिन्नकरस्वभावतेंसोहै
इनस्वभावतेंविषेएहहेतुहैजोसर्व
जीवअपणेअपणेकर्मोंविषेसावधा

अर्थयह सतो रजोगुनतें छत्रिन की उत्पत्ति है अरु रजो
सतोगुन तें ब्राह्मन की अरु रजोगुन तें वैस्यन की अरु तमोगुन तें सूद्र
न की ये वर्न॥ श्लो०॥ ब्राह्मनक्षत्रियविशां उत्पत्ति
है॥१०
शूद्राणां च परंतप॥ कर्माणि प्रवि
भक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः॥४१॥
अर्थयह ब्राह्मन क्षत्री वैस्य सूद्रों के कर्म
भिन्न भिन्न हैं स्वभावजन्य गुनोंतें हे परं
तप॥ परंतप अर्जुन के संबोधन ईं हां इ
सहेत हैं जो अब गुनोंकों तपावो क्यानाश
करो स्वभावप्रभवैर्गुणैः कहीये सात्विका
दि गुनों के स्वभावतें रतिनरतीनके कर्मोंकी
उत्पत्ति है॥४१॥ अब ब्राह्मन के कर्म कि
हते हैं॥ श्लो०॥ शमो दमस्तपः शौचं क्षां
तिरार्जवमेव च ज्ञानं विज्ञानमास्ति
क्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजं॥४२॥ शम दम
तप शौच शांत आर्जव ज्ञान विज्ञान
आस्तिक्य ब्राह्मन के कर्म है स्वभाव

है मुख्य रज जिसके ऐसे १
ज॥ भाव ये सतोगुण स्वभाव तें उपजा जो
अंतःकरण है तिसके एह नौ धर्म तो मुख्य हैं औ
र इत्यादि और हूं हैं॥ शम कहीये वासना
त्याग दम कहीये विषयत्याग तप कहीये
प्राणायामादि शौच कहीये अंतर बाह्य
शुचि रहना शांत कहीये क्षमा आर्जव अ
वक्र स्वभाव ज्ञान शास्त्रीय ज्ञान विज्ञान
अनुभव॥ आस्तिक्य शास्त्र गुरु सत है
और इनका कहना यथार्थ है॥ ४२॥ अब मु
ख्य है रजगुण जिस विषे ऐसे पूर्वसंस्कार
तें उपजा जो क्षत्री है तिसके कर्म कहते हैं॥
श्लो०॥ शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चा
प्यपलायनम्॥ दानमीश्वरभावश्च क्षा
त्रं कर्म स्वभावजम्॥ ४३॥ अर्थ यह शौर्य
तेज धीर्य चतुराई युद्ध विषे अपलायन
दान ईश्वरभाव ए है क्षत्री के कर्म हैं स्वभा
वज॥

सो एह मुख्य है इन
ते मारहि और

भाव ये कहे हैं जो एह सत्व है सो पूर्व के हूं ॥ १
संस्कारन तें उपजे क्षत्री के कर्म हैं। शौर्य
कहीये युद्ध विषे सूरमा होवणा तेज कही
ये तेपपराक्रम धृति कही ये सहणा दाक्ष्यं
कही ये अर्थ धर्म विषे चतुराई। अर
युद्ध विषे अपलायन प्रसिध है दान कही
ये शक्ति अनुसार देणा। ईश्वर भाव कही
ये राजन्याई ॥ ४३ ॥ अब वैश्य शूद्र के कर्म कर
ते है ॥ श्लोक ॥ कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यं वै
श्यकर्म स्वभावजं परिचर्यात्मकं कर्म
शूद्रस्यापि स्वभावजं ॥ ४४ ॥ अर्थ ये
कृषि जो खेती है अर गौवां की टहल अ
र वाणिज करणा वैश्य के कर्म है स्वभाव
जा ॥ अर परिचर्यात्मक कर्म शूद्र के है स्वा
भाविका। एह सर्व स्पष्ट है ॥ ४४ ॥ किंच ॥

श्लो० ॥ स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः स्वकर्मनिरतः सिद्धिं यथा विंदति तच्छृणु ॥ ४५ ॥ अर्थ ये स्व स्व कर्म विषे प्रीतिमान होया भला सिद्धि को पावता है नर ॥ अपने कर्म विषे निरत होया सिद्धि को जैसे पावता है सो सुणो ॥ भावये ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र एह जो चतुर वर्ण है इन के स्व स्वाधिकार को कर्म है तिन विषे प्रीति सहित प्रवर्त्त होये संसिद्धि कही ये मन को योग कर्म योग ज्ञान योग इन को लहते हैं ॥ ४५ ॥ अब तिस सिद्धि पावने के प्रकार को रहे रखावते हैं ॥ श्लो ॥ यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततं स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विंदति मानवः ॥ ४६ ॥ अर्थ ये जिस ते भूतों की प्रवृत्ति है

अरु जिसने एह सर्व व्याप्त है॥ तिस को
अपने कर्मों कर अर्चन कर सिद्धि को पा
वता है मनुष्य॥ भावार्थ॥ यः प्राणिनामंतरो
यमयति यः सर्वाणि भूतान्यंतरो यमय
ति॥ एषत आत्मा सर्वांतरः॥ वासुदेवः स
र्वमिति॥ नारायणः सर्वमिदं पुराणः॥
इत्यादि श्रुति प्रमाण कर ईश्वर आत्मा
को सकल का प्रेरक अरु सर्वरूप सर्वव्यापी
जानके तिस को अपने कर्मों कर दी
र्घकाल निरंतर सत्कार पूर्वक पूजता
होया भली सिद्धि को पावता नर इत्यर्थः
४६॥ कहे को सहज नीच कर्म कर्त्ता है शम
दमादि जो उत्तम कर्म हैं तिन को क्यों नहीं
कर्त्ता इति चेत्याह॥ श्लोक॥ श्रेयान्स्वध
र्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्॥ स्वभा
व नियतं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषं॥ ४७

अर्थ यि वेक्रय है अपरन्त धर्मअंसंपूर्ण कस्या परधर्म संपूर्ण कस्येते स्वभावअनु सार निरंतर कर्म कर्त्ता होया न हीं पाप को प्राप्ति होता॥ भावये जिस पुरुष का जैसा संस्कार है अनुसार जन्म है तिस जन्म अनुसार कहे जो कर्म है तिन को कर्त्ता होया पुरुष सिद्ध को पावता है यद्दपि वह कर्म संपूर्ण हूं न हो आवे अर कै कर्म यद्दपि संपूर्ण हूं सिधता को पावे तो हूं रवे घूकर रनार होता है जैसे राहु दैत्य देवत्यो विषे अमृतपान कीया अर रवि रति सका शरीर तें भिन्न होया॥ सो ईहां एह प्रयोजन है जो कर्मा कर अंतःकरण शुद्ध करना है न कोई कर्म मुक्तदाता है॥ तातें जैसो जन्म तैसो कर्म औरके कर्म किरणे कर रवि रू बता की प्राप्ति नहीं॥ तातें अपने ही कर्म को पुरुष सेवे करे अर सिद्ध को पावे इत्यर्थः

४७॥ किंच: श्लो॰॥ सहजं कर्म कौंतेय सदोषमपि न त्यजेत्॥ सर्वारंभा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृताः॥४८ अर्थ यह हे कौंतेय सहज कर्म सदोष हू न त्यागे॥ सर्व आरंभ निश्चय कर दोषों कर आवरये हैं धूम कर अग्नि जैसे॥ भाव यह जे से कर्म जिस प्रति कहे हैं सो तिस को तिसा कर्म ही योग्य है यदि पि वह कर्म अधम हू होइ सो त्यागने योग्य नहीं का हे को जो सकल आरंभ चैतन्यावर्णरूपी आवर्ण कर आवरये हैं धूम कर जैसे अग्नि आवरया हो॥ सो जैसे शीत निवर्त्यादि कार्य निमित्त अग्नि प्रज्वलत करीयत है अरु तहां धूम दोष को नहीं विचार करीयता तैसे अ नेह कर्ण शुद्धि निमित्त अपणे वर्ण के अ

नुसार कर्म को करे और दोष को न विचारे
इत्यर्थः ४८ ॥ सो किस प्रकार कर्मों को करे
सो कहते हैं ॥ श्लो० ॥ असक्तबुद्धिः स
र्वत्र जितात्मा विगतस्पृहः ॥ नैष्कर्म्यसि
द्धिं परमां सन्यासेनाधिगच्छति ॥
४९ ॥ अर्थ जो सर्वत्र असक्त बुद्धि हो
या और जितात्मा और विगतस्पृह होया
सन्यास कर नैष्कर्म परम सिद्धि को प्राप्ति
भाव प्रहोता है ॥ संगते रहित है बुद्धि जिसकी
जितात्मा कहीये अहंकार का अभाव है जि
सविषे विगतस्पृह कहीये फलकामना
से शून्य है ऐसा जो पुरुष है सो नैष्कर्म
परम सिद्ध कहीये तत्व कत्व अवस्था
को सो सन्यास कहीये कर्म कर्त्तृत्व संकल्प क
र्म फलो का त्याग है जिसविषे अथवा म
नो नाश वासनक्षय परम कहीये श्रोष्ठ

ब्रह्मसन्यास है तिसकर तिसको पावता
है॥४९॥ इस नैष्कर्म सिद्धिको पायकर ब्र
ह्मस्वरूप होरहता है सो प्रकार आगे कहि
यावते हैं॥ श्लो०॥ सिद्धिं प्राप्तो यथा ब्रह्म
तथाप्नोति निबोध मे॥ समासेनैव कौं
तेय निष्ठा ज्ञानस्य या परा॥ अर्थ वह
सिद्धिको पायकर जैसे ब्रह्मको पावता है
तैसे मुझते तू सुनो संक्षेपकर हे कौंतेय
ये ज्ञानकी परम निष्ठा है॥ भावये पूर्वक
ही जो परम सिद्धि तातैहैं तिसको पायकर जो
सो ब्रह्मको पावता है अर्थ यह ब्रह्मस्वरूप
होजाता है सो प्रकार मैं तीन श्लोकोंकर सं
क्षेपतें कहताहूं सुनो ५० तत्साधन कथ्य
ते॥ श्लो०॥ बुद्ध्या विशुद्धया युक्तो धृत्या
त्मानं नियम्य च॥ शब्दादीन् विषयां
स्त्यक्त्वा रागद्वेषौ व्युदस्य च॥ ५१ अर्थ यह

विविक्तसेवी लघ्वाशी यतवाक्कायमानसः॥ ध्यानयोगपरो नित्यं वैराग्यं समुपाश्रितः॥ अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहं
विमुच्य निर्ममः शांतो ब्रह्मभूयाय कल्पते॥ ५३

[illegible]

शुद्धबुद्धिकरयुक्तहोया अरधीर्यको
लीयेंमनकोरोकर अरशब्दादिवि
षयोंकोत्यागकर अररागद्वेषकोत्याग
करा।१ एकांतसेवी अल्पाहारीजीतकर
वाक्कायमनको॥ नित्यध्यानयोगपराइ
णावैराग्यकोभलीप्रकारआश्रयकीयेहुये
२। अहंकारबलदर्पकामक्रोधपरिग्रह
कहीयेहठ इन्होंकोत्यागके निर्मम अरशां
तहोया ब्रह्महोवणतांई योग्यहोताहै।३
भावयेशुद्धबुद्धकहीयेरजतमतेरहितकेव
लशुद्धसत्तोसोतिनकरजुआहोया अरआ
सनादिकेकरकेविषेधीर्यकोधारचेहोये अ
रमनकोवशकरिमातात्रादिपंचवर्त्तीतेरहेतक
रके अरशब्दादिपंचविषयकोत्यागकर
[illegible] मोक्षोरलक्षणासर्वसपष्टहैं
इनलक्षणोंसंयुक्तहोयाब्रह्महोवणतांईयो
ग्यहोताहै॥ तहांप्रवृत्तिपरमात्माहूंहै प्रवृत्ति
बंधोकेनाशतैंईहांहीब्रह्महोताहैइतिप३

ऐसी अवस्था को प्राप्त होया व्यवहार को
कैसे करता है॥ ता को कहते हैं॥ श्लो०॥ ब्रह्मभूतः
प्रसन्नात्मा न शोचति न कांक्षति॥ समः स
र्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते परां॥५४ अर्थ
ये॥ ब्रह्मस्वरूप होया प्रसन्न है आत्मा जिस
का न शोच करता है न कांक्षा॥ समान है स
कल भूतों विषें मेरी परम भक्ति को लह
ता है॥ भावये ब्रह्म कहीये सकलोत्कृष्ट
आप को निश्चय करके अरु आनंदस्वरूप
आप को जान के सकल पदार्थों को आप
विषे कल्पित देख कर गये हैं ये पदार्थ का
शोच नहीं करता और अप्राप्त वस्तु की कांक्षा
नहीं करता॥ सकल भूतों विषे मुजपमे
श्वर को जान के अर्थ यह शत्रु मित्र के
भेद को त्याग के मेरी परम भक्ति को करता
है अर्थ यह मैं जो आत्मा देहरूपों को अंगी

कारकरके व्यवहारकरताहै।। ५४ ॥ अब फलकहतेहैं॥ श्लोक॥ भक्त्यामामभिजानाति यावान्यश्चास्मितत्वतः॥ ततोमांतत्वतोज्ञात्वा विशतेतदनंतरं॥ ५५॥ अर्थ ये भक्तीकरमुजकोजानताहै जितनाअरजोहूंतत्वते॥ तिनतेपीछेंतत्वतेंमोकोजाणकेतिनतेपीछेंप्रवेशकरताहै मुजविषे॥ भावयेपूर्वकहाब्रह्मस्वरूपकरस्थितजोज्ञानीहै सोमोकोंजितनाहूं कहीयेंसर्वव्यापी अरलक्षरूपकरयश्चास्मिकहीयेशुद्धस्वरूपभक्तीकरकहीयेदोनोस्वरूपसोईहै इसरनेक्यकोधारकरजानताहै तिनतेंपाछेंतत्वतेआत्याकहीयेद्वैतएकभावतेरहितहै ऐसेजाणकेप्रवेशकरताहै मुजविषेअर्थयहबजुभ्यानोसमाधिरूपरहताहै अरजोकदाचितउत्थानहूआहोताहै तोहूंकरताअकरताजाणकरशीघ्रहीस्वरूपनहोजाताहै इत्यर्थः॥ ५५॥

कौल
कर्मकर्तौंविषें तो तिसके हैं नइ मूंगहोवेगा
इति चेत्याह॥ श्लो०॥ सर्वकर्माण्यपि सदा
कुर्वाणो मद्व्यपाश्रयः मत्प्रसादादवा
प्नोति शाश्वतं पदमव्ययं॥५६॥ अर्थ यह॥
मेरे आश्रय होया सर्वकर्महूं सदा कर्ता हो
या मेरी प्रसन्नताते निरंतर है अरु अव्यय है
ऐसे पदकौ पावता है॥ भाव यह जु जते [illegible]
और भावकौ परित्यागते व्यवहारिक अप
वा वैदिक कर्महूं लोकसंग्रहार्थ कर्ता हो
या मद्प्रसादात कहीये मेरे स्वरूपकी
अभेद स्वरूप प्रसन्नताते शाश्वत कहीये
सदा एकरस है इसीतें अव्यय है ऐसे पद
कौ प्राप्ति है॥ ताते तिसके हैं न भाव कदाचि
तन हीं इत्यर्थः॥५६॥ अब श्रीभगवानजी
अर्जुन प्रति संबोधन करके [illegible]
का उपदेश करते हैं॥ श्लो०॥ चेतसा सर्व

कर्माणिमयिसंन्यस्यमत्परः बुद्धियोग
मुपाश्रित्यमच्चितःसततंभव॥५७॥
अर्थयेचितकरसर्वकर्ममुजविषेअ
र्पणाकरकेअरमत्पराइणाहोयाबुद्धि
योगकोआश्रयाकरियेहुयेमच्चितनिरं
तरहोवो॥भावयेहेअर्जुनमानसीत्या
गजैसेशास्त्रोंविषेकहाहैतिसकोअंगी
कारकरकेमुजपरमेश्वरअधिष्टानस्व
रूपपराइणाहोयासकलकर्ममुज
विषेअर्पणाकरोअर्थयहशरीरअर
इंद्रियोंकरजोकर्मकरोसोषट्कारक
मुजकोजाणोअरबुद्धियोगकहीयेवि
वेककोग्रहणाकरकेचित्तकोदीर्घकाल
निरंतरसतकारपूर्वकमेरेविषेराखो
अर्थयहमैंभावसकलवासनाकात्या
गकरो इत्यर्थः॥५७ ननुएकतोमया

नकरहिंसोस्वरूपपुरुषकेहूसरा रतिनविषे
पूज्यजोगुरुदेवअरुभीष्मादिवडेहै
तिन्होंकोहतेऐसाजोअधर्महसमुझके
तिनकोकैसेमैंनरोंनहींकहतेहैं॥श्लो०
मच्चित्तःसर्वदुर्गाणिमत्प्रसादात्तरि
ष्यसि॥अथचेत्त्वमहंकारान्नश्रोष्यसि
विनंक्ष्यसि॥५८॥अर्थयहमच्चित्तहो
यामेरेप्रसादतेंसर्वदुर्गणोंकोतरेंगा
॥जेकरअहंकारतेंनसुणेंगातोंनाश
होवेंगा॥भावयेमोहकेवशहोतेइनसं
बंधीयांसाथयुद्धकरणाजोतुमकोस
मुझस्वरूपदृष्टआवताहैसोएहसकल
संबंधीभगवत्रूपाकीनेहींचतहैंसोइन
कोमेरेउपदेशअंगीकारकरणातेंनरे
गा॥निजतुमाराउपदेशभगवत्रूपाकीनहीं
तेरावताहै॥उत्तरयहहैयमेरेरनेक्षयवि
षमृतनहीहैपरंतुतुजसारबोधअम

सं बंधीयों को सातस मुऊँ तें भी अरधिक है अरजो तूं हठ तें इन कहे मेरे उपदेश को न श्रवण करेंगा तो न कारिके को तुज को प्राप्ति होवेंगी॥ मनु गुरों अरु बडेओं का मान मारणा न कर्के को हाना होवेगा॥ उत्तर गुरों का उपदेश जो अपणो धर्म के स्थापणार्थ है सो तिस का न मानणा तुज के नर्क दाता होवेगा॥ पद्यार्किंचः श्लो०॥ यद्हंकार माश्रित्य न योत्स्य इति मन्यसे॥ मिथ्यैव व्यवसायस्ते प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यति॥ ५९॥ अर्थ यह जो कर अहंकार को आश्रय करके न युद्ध करेगा ऐसे मानेगा॥ तो तेरा निश्चय मिथ्या है अपणा प्रकृत तुज को प्रेरेगी॥ भाव यह जे कछु आप को मान कर वा पाप तें भय भीत होया युद्ध न कीया चहेंगा तो एह निश्चय ते रा निराधी होवेगा॥ काहे तें जो तूं क्षत्री धर्मवान कुलवान है

होकों अपरा कृती स्वभावयुद्धरूवे
षेप्रेरेगा।। पर्स।। किंच।। श्लो०।। स्वभा
वजेन कौंतेय निबद्धः स्वेन कर्मणा।।
कर्त्तुं नेच्छसि यन्मोहात् करिष्यस्यवशो
ऽपितत्।। ६०।। अर्थ यह जो मोहतें करचा
नेचाहेंगा सो अपनो स्वभाव करउत्प
त्ति कर्मकर प्रेर्‍याहोया अवशहुयकरेंहो
गाहे कौंतेय।। भावयेजे मोहके वशहोया
युद्धकर्मकोन कीयाचहेंगा तो अपनो कृती
स्वभावतें उत्पत्तिजो उत्साह आदिकर्म हैं
अथवा प्रकृतियोध्योंके उत्साहकर्मको देख
करजन्माजो आपके आमरष हैं तिस
कर प्रेर्‍याहोयायुद्धकोकरेंगा इत्यर्थः ६०
कर्मप्रेरक होये अरपुरुषप्रेर्य होया इ
त्तिचेत्याह।। श्लो०।। ईश्वरः सर्वभूतानां
हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।। आमयन सर्वभूतानि

जोहै

यंत्रारूढानिमायया॥६१॥अर्थ हे ईश्वर सकल भूतों के हृदेदेशविषेइस्थित॥सोभ्रमावता है माया कर के सकल भूतों यंत्रारूढोंको॥भावयेशरीररूपहे इंद्रियरूपहै मनबादर जो है इत्यादि जो अंतःकरणउपाधि सब्द विषे के हारूपहे तिसपरआरूढजोजीवहैसोतिनजीवों सर्वोंका प्रेरक अंतरयामीजोसकलों के हृदेदेशविषेस्थितहैसोमायाकर अर्थ यह मायापरिणामपूर्वसंस्कारो केरसकलकोस्वधर्मविषे प्रेरणाकरता है॥तातेंकर्मप्रेरकनहीजोकर्मका मीलिसिधकर्ताअंतरयामीसर्वरूपात्मा है सो ईश्वर कर्मों द्वारा सर्व को प्रेरणा करता है इत्यर्थः॥६१॥ननु ऐसे सर्वप्रेरक ईश्वरका ज्ञान मुजको कैसे होवे॥उत्तर

को प्राप्ति हो

श्लो०॥ तमेव शरणं गछ सर्वभावेन भा
रत॥ तत्प्रसादात्परं शांतिं स्थानं प्राप्स्य
सि शाश्वतं॥६२॥ अर्थ ये तिस ईश्वर की
शरणा को प्राप्ति हो सर्वभाव कर हे भारत॥
तिस की प्रसन्नता कर परम शांति अरु शा
श्वत स्थान को प्राप्ति होवेगा॥ भाव ये तिस
पूर्व निरूपित ईश्वर की शरणा कहीये ति
सही को प्रेरकपने अरु भारता मरीता जा
ता सर्वभाव कहीये हारजीत दिषे॥ तहां
प्रमाण है सर्ववासुदेव ही है इति श्रुतिः
सो तिसही की प्रसन्नता कहीये तिसही
को सर्वरूप जाणपने तें परम शांति कहीये
राग द्वेष तें रहित चित्त की अवस्था अ
रु शाश्वत स्थान कहीये परमधाम परम
वैष्णवपद तिस को प्राप्ति होवेगा॥ अर्थ
यह मेरा ही स्वरूप होंगा फेर जनमम वे
रूप को कदाचित न प्राप्ति होवेंगा इति ६२

अब श्रीभगवान् जी अर्जुन प्रति अप
णी अप्रसंगता को कारण कहते हैं। श्लो०॥
इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद् गुह्यतरं
मया॥ विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छ
सि तथा कुरु॥६३॥ अर्थ यह रहस्य
हू ते गुह्यतर ज्ञान मैं ने तेरे तांई कहा
है सो संपूर्णता ते विचार कर जैसे इच्छा
होत है से करो॥ भावार्थ यह सकल उपनिष
दों का साररूप जो ज्ञान है सो जीवन्मु
क्ति उपदेश सहित मैं ने तेरे तांई उपदे
श करया है सो इन उपदेशों को आदि
अंत सहित विचार जिस सरवे बे लोक
परलोक का नेरे श्रेय होय सो इस कर
इति॥६३॥ किंच॥ सर्वगुह्यतमं भूयः
शृणु मे परमं वचः॥ इष्टोऽसि मे दृढमि
ति ततो वक्ष्यामि ते हितं॥६४॥ अर्थः

सर्वगुह्यतमं परमं वचनं मेरे पुनः
सुणो॥ इष्ट है मेरा अरदृढ मान्या है
तीसी तैं तेरे हितानंमितं कहता हूं॥ भा
वये सकलतैं श्रेष्ठ अनुत्तम वहमेरा
श्लोकों विषे मैं रुचिपे तजो परमं वचन है सो
मै तेरे ताई कहता हूं॥ काहेतैं जो तूं मेरा प्रि
य है॥ अरु मेरा तेरे विषे ममत्व है ताते
तेरे कल्याणार्थ कहता हूं इत्यर्थः॥ ६४
॥ सोई वचन अब कहते हैं॥ श्लो०॥ मन्म
ना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कु
रु॥ मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने
प्रियोसि मे॥ अर्थ यह मच्चित हो मेरा भ
क्त हो मेरा पूजक हो मोको नमस्कार क
रो इस प्रकार मोको प्राप्त होवेगा सत्य
है तेरे साथ प्रण करता हूं मै तूं मेरा
प्रिय है॥ भावये मन करस देव अद्वैत

म्हिं एक अरव्यवहारदृष्टिविषेसर्वको
मेरास्वरूपजाणाकरभक्तिकरताहोया
मैहीसकलदेवत्यांकारूपधारकरय
ज्ञोकाभोक्ताहूं इसप्रकारजाणाकरलो
केकल्याणार्थअरदेवत्याकेअरणार्थ
यज्ञोंकोकरताहोया सभकोईश्वररू
पजाणाकरमोकोंनमस्कारकरो॥प्रण
वतमंढवद्भूमं अश्वचंडालगोखर:॥इ
रे॥इसप्रकारमोकोंपावेगा॥अर्थयह
अद्वैतस्वरूपहोरहेंगा॥एहसत्यहैअ
र्थयत्वेदोक्तहैतेरेसाथप्रणाकरता
हूंमैकाहेतेंजोतूंमेरासखाहैं॥६५॥
किंच:॥श्लो०॥सर्वधर्मान्परित्यज्यमा
मेकंशरणंव्रज॥अहंत्वांसर्वपापेभ्यो
मोक्षयिष्यामिमाशुच:॥६६॥अर्थये
सर्वधर्मोंकोभलीप्रकारत्यागकरके
मुझएककीशरणकोप्राप्तिहोवो॥

मैंतोकोंसकलपापोंतें मोक्ष करोंगामत
शोककरो॥ भावये सर्वधर्मकहीयेसक
लमत्तोकर स्वरूपतें जेधर्महैं तिनसर्वों
कोपरित्याज्यकहीये अरु येघासरहितति
नकोंत्यागकरमुझअद्वैतपरमस्वरूपकी
शरणाकोंप्राप्तिहोवो अर्थयहसोईस्वरूप
होरहो॥ मैंतोकोंसकलपापोंतेमुक्तक गी ९८
रोंगा अर्थयह मैंदेहहैंनाहं प्राणइन्द्रिकानि
नाहं बुद्धिर्नाहं मध्यासमूलं नाहं सत्या
नंदस्वरूप श्रीरामा मायासाक्षीरूप
एवाहमस्मि इसप्रकारनिश्चयवानहो
रहेंगा॥ मतशोककरो अर्थयहशोका
वगम्यअवस्थाकोंप्राप्तिहोवेंगा इत्यर्थः
॥६६॥ अब श्रीभगवान्जीएहकहतेहैं
जोएहउपदेश अनधिकारीप्रतेकहणा
योग्यनहीं॥ श्लो॥ इदंतेनातपस्काय

नाभक्ताय कदाचन ॥ न चाशुश्रूषवे वा
च्यं न च मां यो ऽभ्यसूयति ॥ ६७ ॥ अर्थ यह इन
उपदेश को न अतपस्वी न अभक्त न अशु
श्रूषन मेरे निंदक नां इन्ते रेतांई कदाचि
त कहनो योग्य है ॥ अतपस्वी कहीये इंद्रि
यारामी अभक्त कहीये ईश्वर आत्मा अर
गुरु की श्रद्धा अर पूजा ते रहित अर अशु
श्रूष कहीये सर्वात्म को न जानता हो या जो
रागद्वेष शील है अभ्यसूयक कहीये अनीश्व
रवादी सो इन्हो को न कहे मेरा उपदेश इस्ते
पूर्वात्विषः ॥ ६७ ॥ इस उपदेश का अधिका
री मेरा भक्त है सो अब कहत है ॥ श्लो० ॥ य इ
मं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति ॥ भ
क्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयं
६८ ॥ अर्थ यह जो इन परम गुह्य को मेरे भ
क्ति रविषे धारता है सुजरविषे परमभक्ति

कोकरके सोऽसंन्यासमोकोंप्राप्तिहोताहै।
भावयेभक्तकहायेतत्‌चिंतनतत्कथनंतत्प
स्परबोधनंइत्यादिलक्षणवानसोऽसेभ
क्तिकोजोएहपरमभकहायेश्रेष्ठअरगुह्यक
हायेउपनिषद्‌सारकोउपदेशाकरताहै
मेरेविषेपरमभक्तिकोकरकेकहायेजोका
मनातेरहित, मेरेअर्थसोपुरुष
संन्यासतेरहितमोक्षकोप्राप्तिहोताहैअर्थये
जीवन्मुक्तहोयाविचरताहैइत्यर्थः॥६८॥
किंच॥ श्लो० नचतस्मान्मनुष्येषु क
श्चिन्मेप्रियकृत्तमः भवितानचमेतस्मा
दन्यःप्रियतरोभुवि॥ अर्थयह तिसातें
मनुष्योंविषेकोईएकमेरेप्रियकर्त्तानहीं
होता तिसातेमेरेताईऔरकोईप्रियतर
नहींपृथ्वीविषे॥ भावयह भक्तितेंमुज
कोप्रियकोईएकनहींवाहतेंकाहेतेंजोम

कि जैसा मेरा श्रेयकर्त्ता कोई एक नहीं
हुए॥ किंच:॥ श्लो० ॥ अध्येष्यते च य इमं
धर्म्यं संवादमावयो: ज्ञानयज्ञेन तेनाह
मिष्ट: स्यामिति मे मति:॥७०॥ अर्थ यह
धारता है जो इन धर्मसंवाद मेरे तेरे को॥
ज्ञानयज्ञ कर तिन करमें इष्ट होता हूं ए
ह मेरे मान्य है॥ भावये जो पुरुष श्रद्धा
सहित इन उपदेशों को सार विचारता है
तिस पुरुष के ज्ञानयज्ञ कर कहीये इ
न शास्त्र के अर्थ विचार राकर मैं हीफ
ल होता हो एह मेरे मानी होई है॥ अर्थ यह
जो कोई इसका तात्पर्य जाणता है सो तो मु
जैसा ब्रह्मस्वरूप होता है अर जो कोई श्र
र्थ मात्र धारता है सो साधुओंके स्वरूप मेरे
को पावता है॥ अर जो पाठमात्र इन शास्त्र
को धारता है सो तिसके हृदय में धारिय
ज्ञो समान फल देता है॥ इति ७०॥

पाठपर्यंतफलकोकहिकेअबश्रवणका
फलहूंकहतेहैं॥श्रो॰ श्रद्धावाननसूयश्च
शृणुयादपियोनरः सोऽपिमुक्तः शुभांलो
कान्प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणां॥७१॥अर्थ
यहजोनरश्रद्धावानअरअनिंदकहो
याश्रवणकरताहै॥सोहूमुक्तहोया
पुण्यकर्त्ताकेशुभलोकोंकोप्राप्तिहोता
है॥भावयेजोपुरुषश्रद्धासहितश्रव
णमात्रहूकरताहैसोहूंअशुभयोनीते
मुक्तिहोयादेवत्योंकेलोककोपावता
हैइति॥७१॥अबश्रीभगवानजीअ
र्जुनिकाअनुभवपूछतेहैं॥श्लो॰॥क
च्चिदेतच्छ्रुतंपार्थत्वयैकाग्रेणचे
तसा॥कच्चिदज्ञानसंमोहःप्रणष्ट
स्तेधनंजयः॥७२॥अर्थयहहेअर्जुन

कुरुक्षेत्रैं नें एह मेरा उपदेश एकाग्रचित्त नकर श्रवण कस्या है॥ कुरु अज्ञान मोह स हत तेरा नाश हुआ है हे धनंजय। भावये पार्थ कहीये पृथा हरदे अर धनंजय कहीये आत्म धनकामी ऐसा जो अर्जुन है तिस प्रति श्री भगवान् जी कहा है अर्जुन एह मेरा उपदेश कछु तुझ श्रवण कस्या है॥ अर मोह स हित अज्ञान तेरा नष्ट होया है। अज्ञान कही ये मै ज्ञान नहीं अर मोह कहीये मैं देह हूं अर एह संबंधी मेरे हैं सो एह भाव तेरा नाश हुआ है वा नहीं॥ ७२॥ श्री भगवान् जी के परम गीता का श्रवण कर के आप के अनुभव को कहता है॥ अर्जुनोवाच॥ नष्टो मोह स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत॥ स्थितोस्मि गत संदेहः करिष्ये वचनं तव॥ ७३॥ अर्थ यह तुमारे प्रसाद तें मोह मेरा नष्ट है अर स्मृत मै पाई है हे अच्युत॥

रस्यते नहं मैं अरु सांनूय मेरे ना ऊहै करो

गा तेरे वचन को॥भावयो अच्युत कहीये

जो कदा चित विकार कोन प्राप्त हो अरु सर्व

विकार जिसर विबेक रलीत हो॥अर्थयह

वसुदेव के गेह जनमले रा अरु ब्रज विबे

केलोल करतो अरु कंसादिको का मार

ता अरु भारत का कोन करतार है लो

रकि कदा एक रनु जर्विषे है अरु तूं सदा

असंग एकरस है इसी ते अच्युत है सो

है अच्युत ना ऊहै बांधवों का स्नेह मेरे अरु

मैं देह हूं अरु एह पुन्य है अरु एह पाप है

एह लोक है एह परलोक है सो इन्हों वि

बेइष्ट हो इ अरु नेष्ट नहो इ सो एह मेरा मो

ह ना ऊहै॥काहे ते जो पूर्व स्मृत ते रे प्रसा

द ते मैने पाई है॥स्मृत कहीये वास्तव स्व

भी

ऽ६।७

स्वरूपजोईश्वरथासोईश्रबमुजकोस्मरण
होयाहैसोकैसो॥श्रहंजजोईस्वरनित्यहूं
शुद्धहूं अचलश्रोरकूटस्थहूं सोतेरीप्र
सन्नताकरमेरेएहस्मृतहोईहै॥तत्रप्र
माणमाह॥श्लो॰ नरत्यरवेद्यांवितनां
हृदयस्थितमेवरवेरत्ति योगीमायामय
पांचतस्मैरवेद्यात्मनेनमः श्रबहेभ
गवनूमैस्थिनहूंक्यामैहरिहूंश्ररस
र्वयहजनार्दनहैकार्यकारणसमूहमु
जतेश्रन्यनहीं इसतैमैसर्वहूंनिरूप
णश्रनरूपणतेवेनहींकछुहोरएही
मुजकीपर्मनेष्टाहैसोएहसंज्ञायतेर
हितमुजकोश्रनुभवहै॥सोश्रबजो
कुछुतुमरीश्राज्ञाहोसोमैकरों॥हे
भगवनतेरीश्राज्ञाहीमुजकेपर्मपदहै

७३॥ संजय उवाच॥ इत्यहं वासुदेवस्य
पार्थस्य च महात्मनः॥ संवादमिमम
श्रौषमद्भुतं रोमहर्षणं॥ ७४॥ अर्थ यह
एह मैं महात्मा वासुदेव का अर महात्मा
अर्जुन का संवाद श्रवण कर्या है कै
सा एह संवाद है जो आश्चर्य रूप है अ
र रोमहर्षण है॥ भाव ये महात्मा कही
ये सर्व है अर सर्व तें अतीत है सो ऐसा जो
श्री भगवान् है अर अर्जुन भी तैसा
है तैसा महात्मा है सो तिन महात्माउं
का संवाद मैं श्रवण कर्या है कै सा
एह संवाद है जो आश्चर्यवत् है॥ श्लो
आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेनमाश्चर्यवद्व
दति तथैव चान्यः आश्चर्यवच्चैनमन्यः शृणोति
सो ऐसा संवाद मैं श्रवण कर्या है
फेर कैसा है जो रोमहर्षण है रोमह

[illegible]

र्षणकहीयेजोश्रवणमात्रतेरोमखडेहो
आवतेहैंअर्थयह अतिआनंदकादाताहै
इत्यर्थः ७४ सोकैसेआश्चर्यकैसेतेश्रव
णकरयाहैसोकहतेहैं॥श्लो० ॥व्यास
प्रसादाच्छ्रुतवानेतद्गुह्यमहंपरं॥यो
गंयोगेश्वरात्कृष्णात्साक्षात्कथयतः
स्वयं॥७५ अर्थयह एतद्गुह्यपरमयो
गं॥ व्यासप्रसादतेमैंसाक्षात्कथयतः
आपयोगेश्वरकृष्णतेश्रवणकरतभ
याहौं॥भावयेसंजयकोएहशुकारदिव्य
आवेद्व्यासजीकेप्रसादतेंप्राप्तिहै
जोहस्तदेशान्तेंकहाहोयाश्रवणकर
लेणा॥सोकुरुक्षेत्रधर्मक्षेत्रविषेयो
गीयोंकाईश्वरसाक्षात्आपनेस्वरू
पकाउपदेशजोकर्तेभयेहैंश्रीभगवा
नजीअर्जुनप्रतिसोतिसश्रीभगवान

जीकेउपदेशको संजय राजा धृतराष्ट्र
सों कहतभयो सोकैसाउपदेशजो हैः
अर्थ यह विषय जेसका धर्मसार सूक्ष्म
तें सूक्ष्म है ऐसा जो योग है सो कहत भ
यो ॥७५॥ श्लो० राजन्संस्मृत्य संस्मृत्य
संवादमिममद्भुतं ॥ केशवार्जुनयो पुण्यं
हृष्यामि च मुहुर्मुहुः ॥ अर्थ यह हे राजा
मैं अद्भुत संवाद को सिमर सिमर कर
कैसा संवाद है जो केशव और अर्जुन का
है और पुन्यरूप है सो प्रसन्न होता हूं फेर
फेर ॥ भावये जो अलोकिक है और पुन्य
रूप कहीये स्वस्वरूप की प्राप्ति करता है
केशव कहीये ब्रह्मादि को काहूं ईश्वर
है अरु अर्जुन कहीये महाबली अर्थ
यह ऐसे उपदेश के धारता हारा सो

रकौकाजोऐसासंवादहैसोफेरफेर
स्वैचारताहोयाप्रसन्नहोताहूं॥अर्थयह
मैंभीसोईरूपआपकोअनुभवकरता
हों॥किंच॥श्लो०॥तच्चसंस्मृत्यसंस्मृत्य
रूपमत्यद्भुतंहरेः॥विस्मयोमेमहारा
जहृष्यामिचपुनःपुनः॥७८अर्थयह
सोसिमिरसिमिरकरअद्भुतरूपहरि
केको विस्मयहोताहूंहेम हाराजअर
प्रसन्नहोताहूंफेरफेर॥अद्भुतरूपह
रिकाएहहैजोपरत्यक्षतोमानुषदृष्टआ
वैतेहैअरसामर्थऐसेहैजोअपना
रदिव्यनूतककरसकलयोधोंकाक्षय
कीयाहैअरसर्वेक्षअक्षयअचलस्व
स्वरूपनिष्ठहैऐसेस्वरूपकोपुनः
पुनःस्मर्णाकरताहोयाविस्मयहो

ताहूं सो खिस्मयएह जो मै। अमनअने
डियअदेहहूं अरको सोस्वरूपको साहू
नरविषयकनाहिं॥ अरफेरकेरप्रसन्न
होताहूं॥ क्यामैसुखस्वरूपहों तपृनपूह
॥७७॥ अबसंजयजीराजाधृतराष्ट्रत
मरविष्यानकोकहते हैं॥ श्लो॰॥ यत्रयोगे
श्वरः कृष्णो यत्रपार्थोधनुर्धरः॥ तत्र
श्रीर्विजयोभूति ध्रुवानीतिर्मतिर्मम॥
७८॥ अर्थयो जहां योगेश्वर कृष्ण हैं अ
रजहां अर्जुन धनुषधारी है तहां श्री
विजयरवि भूतनिश्चितहै एह मेरेनि
श्चयहैहेराजन॥ भावयो योग शब्दकर
केहेजो अष्टांगयोग अरबुद्धियोग
कहीये रविवेकमार्ग है औसो जो योग

५-
५३

हैरतिनवानजोयोगीहैंसोत्तिन्होंकाहूंई
श्वरहैऐसाजोश्रीकृष्णभगवानप
रमात्माहै अरधनुषधारीकहीयेयोधा
अर्थयहसकार्यअज्ञानशत्रुकानाशक
ऐसाजोअर्जुनहैसोऐसाश्रीकृष्ण
अरऐसाअर्जुनजहांहैतहांश्रीक
हीयेदोप्रकारकीलक्ष्मीअरईश्वरी
भेदकरजोश्रीहैसोभीतहांहैंअर
जयनाशकजोशत्रुओंकेवधकरनाहारी
हैसोभीतहांहैअरविभूतकहीयेराज
लक्ष्मीसोभीतहांहै॥सोउपायकर
एहसभीतिन्होंतेंहरजायेंगीइतिचेतमी
हा॥ध्रुवानि अर्थयहरनिश्चतहैसोदिखा
वतेहैं एहजोश्रीआदिलेकीसरूपाहैंसो
परमेश्वरकीशक्तिहैअरपरतिव्रतहै

स्रोपतका त्याग कदाचित न करेंगी इत्यर्थः

१ॐश्रीगणेशायनमः ननुआम्नाय
जोवेदहैतिसकेक्रियार्थत्वतें नहींअनेक
हैहै। आनर्थक्यमतदर्थानाम् १ तद्भूता·
नांक्रियार्थेनसमन्वयः २ यांकाअर्थ।।
अतदर्थकहीयेक्रियार्थरहितजोवाक्यहैं
तिन्होंकेअनर्थभावहै १ अरुजोतद्भूतक
हीयेक्रियाइकिरव्याप्तहैंतिन्होंकेक्रिया
र्थकरकेसमन्वयहै।।ऐसेतहांतहांजे
मिनकरकेवेदकेक्रियापरत्वकेकथ
नतेंउपनिषदोंकेभीक्रियापरत्वयुक्तहै
।।जैसेकह्योहैतंत्रवार्तिककर्त्ताने।।स्नय
ज्ञार्थकर्त्ताकेप्रतपादनकरकेउपनिषद
उकेनिराकांक्षत्वव्याख्योहै।।अर्थयहउपनि
निषदहैंआत्मज्ञानतेंनिराकांक्षहैंअर्थवि
क्यापरहैं।।ऐसेजोकहोतोनहींजोएक
मेवाद्वितीयंब्रह्म १ विज्ञानमानंदंब्रह्म
अचहुरषकोअमिति।।इसप्रकारतद्विषयरी

तकहीयेसो सब्रह्माश्रितें विपरीत आत्म
के प्रतपादन तें अद्वितीयपर्मान दैके क
मंगित्व नहीं बने है॥ अरु येक मांगत्व
वार्त्तिक कृतके भी अनुमत नहीं॥ कैसे
तहां कहे है॥ विज्ञान सर्वत्र संस्कारत्वकर
पाईयत है॥ अरु परांग कहीये कर्मांग आ
ते मज्ञानें और परार्थ विषे है॥ ऐसे निश्चय
करीयो इस प्रकार तें न वार्त्तिक कृत
कर के कथन तें॥ अरु आत्मज्ञान कों न
मित्त मनन तांई मुनजन तीर्थ यात्रादिकों
विषे पर यत्न करे है वह पूर्व श्रुति विषे क
ह्यो है॥ तहां तो लोक तके सत्व से तें ऐ
से भी है पर है तके तो सत्यत्व से भेव है ना
॥ इस प्रघट्टान्तर कर के जो मनन है तिस
मनन कर के तत्व के निश्चय के प्रकार को
कहे हैं॥ मूल॥ मनन इद मुच्यते यदि ति
चेन्न नुतर्क हन्ते। व्यभिचरति क्वच क्वचे

विज्ञान कहीये अद्वितीय ब्रह्म सो सर्व औरजामय दारद विषे संस्का
रत्वकर के पाईयत है॥ अरु परांग कहीये वाह्य कारक हा जो कर्त्ताकि
यक्षांगत्व है सो आत्मविज्ञान तें और विषे है

इनमूलकेग्राहकरतेदोनकहतहैं११

मृषा न नथो भयपुक्। अवं हतये विक
लइ खितोंघ परंपरया। भ्रमयति भार
ती त उरू हृन्निभिरुक्यजआन् २२ ॥
याकोअर्थ॥ येविम्बधर्मी है अरसत्तओसे
साध्यइनकोधर्म है अरअसत्तें उत्पन्न है एहहै
तहै जो जिनतें उत्पन्न है सो तद्रूपही देख्यो है
जैसे कुंनकतें उत्पन्न कुंडलादि तद्रूपही है।
तद्वत् तहां जेतेंने विम्बको सत्तें भेदसा
धीयत है तद् अपारिनत्व के कथन करके भे
दको देखवेतें ये हेत विरुध है॥ इसको कहें हैं
जो ननु तर्क हैतं इत्ति॥ ननु हम भ्रमभेदको सिद्ध
नहीं करे हैं। किंतु तद्वन्नात्व करके भेदको प्र
तैनुबोधक रहैं कुंडलादिकको जैसे॥ तहां भेदके
प्रत्तिबंधविषे भ्रमे देही है। इति चेत कहीये
ऐसे आनुं का करके भने कालकत्व कर
के इरघित करे हैं॥ व्यर्थ मे चरत्तीक च अर्थयर

कहूं एक पेअभेद व्यभिचार को पावै है रषित
पुत्रादिक को विषे अरु मुद्गर घट हूं सादिक को
विषे तैसें दर्शनतें॥ ननु तदुत्पन्नत्व नाम
तदुपादानत्व है न कोई तत्र स्मितत्व है इसी
तें अनेकांतकत्व नाहं। ऐसें आशंकाक
र कहैं रषित करै है। जो कहूं एकमषा है॥
गुणोपादान हूं ऐसें जो फणी है तिनके गु
णत्व नहीं किंतु मिथ्यात्व है। अन्यथा कु
ण्डलादिक को जैसें अबाधके प्रसंग होवे॥
इसीतें फेर हूं अनेकांतकत्व होवै है। इत्ति
भावः॥ ननु तहां केवल गुणमात्र फणी
कों उपादान नहीं किंतु अविद्यायुक्त गु
णफणी को उपादान है। तथाभूत के अ
वस्तुतः तो युक्त है फणी के मिथ्यात्व ऐ
सें आशंका करके तत्तुल्य ईहां भी है इसी
तें रषित करै है। न तथाभयपुक

इनकोअर्थयेईहांभीअविद्यायुक्तसत्त
केउपादानत्वहै एवंमृत्तकेवस्तुत्तसत्य
त्वनहीं।।इसीतेंसदुपादनत्वअसिद्ध
भयो।इसतिप्रपंचकेवस्तुत्तेसज्ञायनहीं
इतिपूर्वार्धः।।ननुइनहेतुकरप्रपंचकेस
तमततहोहम।औरहेतुकरकेसाधेहैं
सोअबदिखावेहैं।।येप्रपंचसत्तहैअर्थ
क्रयाकारित्वतें ईहांव्यतरेकोदृष्टांतदे.
खावेहैजोअर्थक्रयाकारीनहींसोसत्त
नाहींजैसेमृगकेविषेरजत।।नहांसिद्धां.
तीकहेहैं।। व्यवहृतनये विकल्प इ बिर इति।।
व्यवहृतेकहायेअर्थक्रियानरमेतविक
ल्पजोभ्रमहैसोइएहै।।किसीकालवि
षेकूडेकनककरहूव्यवहारकोदर्शन
तें।।ननुएकस्थानविषेसत्तकेऔरस्था
नविषेजोआरोपहैसोभ्रमहैएहप्रसिद्ध
अर्थयहभ्रमइसीकानामहै   है

अर्थयहकहूंएकव्यावहारनरमेनयहभ्रमवो
ष्वितहैसोइसवांछेतत्त्वकरइनकेसतानही
व्यवहार

३ तुमजो अत्यंत असत्य प्रपंच को मानते हो सो अत्यंत असत्य अर्थात् जो वंध्यापुत्र है तिसकी तुल्य तो अमन होय कहता

अत्यंत असत्य से तौ कैसे ये प्रपंच भ्रम हो ३

अरु सत्य से तौ अद्वैत की सिद्धि नहीं होत

तैसे कह्यो है मद्वैते ॥ असत जो वंध्यापुत्र

त्व है सो कैसे अध्यास करी है ॥ अरु जो

व कर्तृकर जात हैं गुरु अरु सत्य इ

सकी सो अध्यारोप कार्य विषे करीये

कि न करीये न करीये ऐसे कहता है

सिद्धांती ॥ अंधपरंपरया यांको अ

र्थ अंधपरंपरा कर के लोक विकल्प क

हीये भ्रम है सो अर्थ क्रया न मेतह

ए है ॥ भाव यह संस्कारजन्य जो भ्र

म है सो संस्कार की सिद्धि निमित पूर्व

प्रतीत मात्र को अपेक्षा करता है न व

स्तु के सत्व को ॥ प्रतीत विद्यमान सं तौ

वस्तु के सत्यत्व के अभाव कर के भ्रम

[illegible]

अर्थ यह अमृत और कछु नहीं॥ इस हेतु तें प्रपंच को सत नहीं॥

तो व्यतरेक के अदर्शन तें॥ इसी तें अना
दित्व तें देख्या जो पूर्व पूर्व भ्रम है तिन का
उत्तरोत्तर विषे आरोप होवेगा॥ सो
दीन अंधपरंपरान्याइ कर के व्यव
हार सिद्ध होवेगा॥ इस हेतु तें यें तेरा है
तो अप्रयोजक है अर्थ यह तेरे कहे का
वे रक नहीं होता॥ ननु अक्षय्यं ह वै चा
तुर्मास्य याजिनः सुकृतं भवति अपाम
सोमं अमृता अभूम इत्यादिक श्रुति
कर के कर्मफल के नित्यत्व के प्रतिपा
दन तें अकृतन ही बल के कहते जो नि
त्य वस्तु असत नहीं होवे है॥ तातें वेद
प्रतिपादित्व तें द्वैत सत ही है ऐसे आ
शंका कर के कहे है॥ हे भगवन तेरी जो
भारती कहीये वेद तिसकी आज्ञा रागिहै

हे मम पावे मे अमृत को और अमर होवेंगे

253-MS

स्कं

सो उरवक्षि कहीये बडा जो लो
कराख्वत्ति है तिन्हों कर के उक्व
जेड कहीये कर्मप्रधा के भारकर
आक्रांत कहीये दबाये है ऐसे जे मं
द मत है तिन्हों को मुह्यता करे है।।
भाव यह जो वेद कर्मों के फल के त्रि
त्यत्व को न ही अभिप्राय करके कहे
है। किंतु लुभ्यता करके प्रशंसा
त्र को कहे है अभिप्राय करके कहे है
विधि के वाक्य तें।। अन्यथा वाक्य
भेद प्रसंगात्। तद्यथेह कर्म जितो लो
कः क्षीयते एवमेवामुत्र पुण्य जितो लो
कः क्षीयते इति म्याधेपदृहितन्मसंत
र विरोधाच्च। तातें विधि जो वेद है तिसकी एक वाक्यता है।। अतः कर्म

अथ यह कर्मकांड जो स्वप्न को सत्तक
हतो हैं॥ सो तिनको भ्रम मात्र ही कारणा है
डो के स्वप्न एह सत्त भ्रममात्र ही है। इ
नेही करके तस्मा वा एतस्मादात्मन
आकाशः संभूतः इत्यादि श्रुती के हंस्य
नन्यपर त्वरदिखाया॥ श्लोक॥३॥ भूत
भवतः सतोपि भुवनं सकलैव सर्पः स्रजः कृ
तकार्यमपीह कूटकनकं वेदोपि नैवंपर
रः अद्वैतं तव सत्परंतु परमानंदं पदं त
न्मुदा वंदे सुंदरमिंदरानत हरे मामुंच मा
मानतम्॥१॥

25

253 — MS.